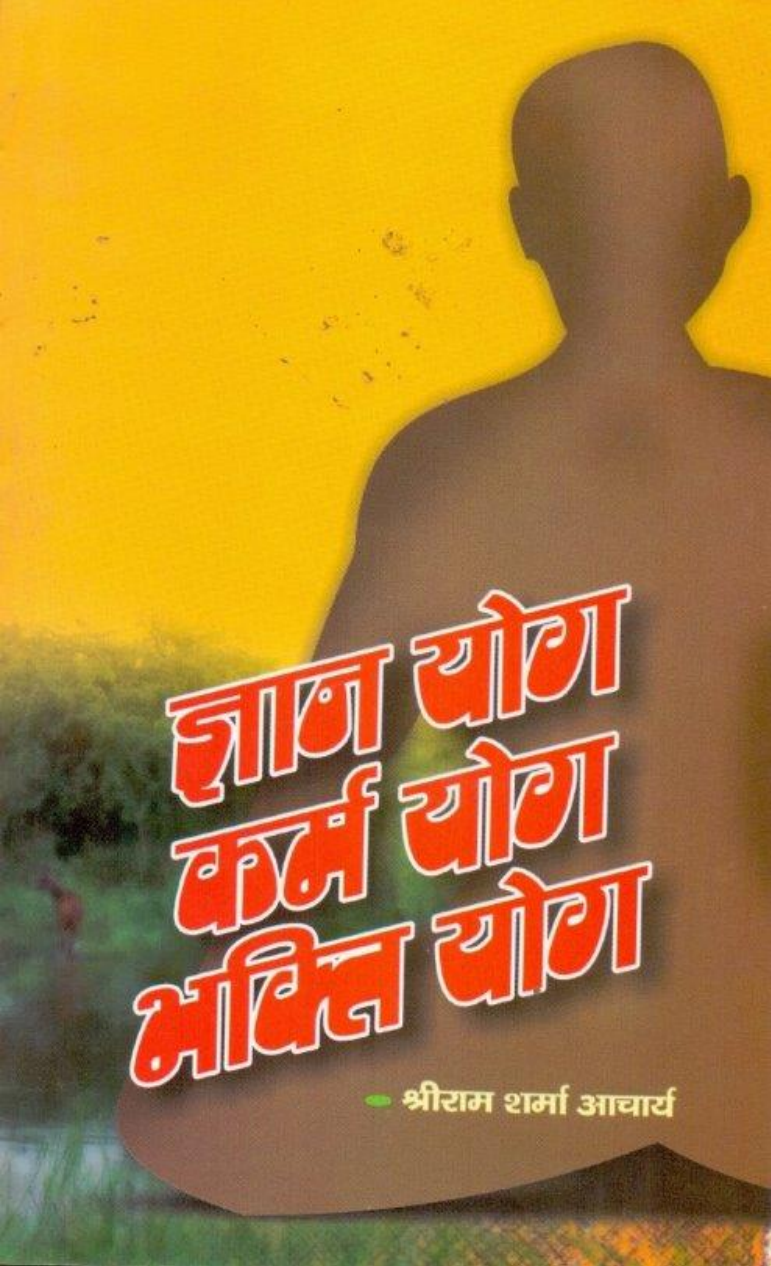
ज्ञान योग
कर्म योग
भक्ति योग
श्रीराम शर्मा आचार्य

॥ ॐ ॥

ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग

*

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

*

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनर्मुद्रित सन् २०१४ मूल्य : ९.०० रुपये

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भूमिका

योग का अर्थ है—मिलना। एक वस्तु में जब कोई दूसरी वस्तु मिलती है तो उस मिलन को योग कहते हैं। हमारा मन एकांगी है, उसमें पाशविक संस्कार जमे रहते हैं। इन संस्कारों में दैवी ज्ञान का, सत्तत्त्व का समावेश जिन उपायों से कराया जाता है, उन्हें योग साधना कहते हैं।

आज भ्रमवश ऐसा समझा जाता है कि योग साधना किन्हीं विशेष व्यक्तियों का काम है। जो घर-बार छोड़कर जंगलों वनों में रहें, जटा रखें, भभूत लपेटें, भिक्षा माँगें, कमंडल, चिमटा, मृगछाला धारण करें, उन्हें ही योग साधना करनी चाहिए, पर वास्तविक बात ऐसी नहीं है। जीवन को समुन्नत, सुसंस्कृत और सुविकसित करने के लिए एक शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता होती है, यह शिक्षा पढ़ने-लिखने की नहीं वरन जीवन में उतारने की—'गुनने' की होती है। यही व्यावहारिक सार्वभौम योग है।

जीवन विज्ञान के भारतीय आचार्यों ने मनुष्य की आंतरिक मनोभूमि का उचित रीति से निर्माण करने के लिए तीन योगों का—ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग का आविष्कार किया है। इसे योगत्रयी कहते हैं। इस योगत्रयी का इस पुस्तक में इस प्रकार विवेचन किया गया है कि पाठक इस गूढ़तत्व को आसानी से समझ लें। आशा है पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी। □

—श्रीराम शर्मा आचार्य

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ज्ञानयोग

मनुष्य अपने आस-पास जिन वस्तुओं को, जिन समस्याओं को देखता है, उनके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। जो भी चीजें उसके सामने आती हैं, उनके बारे में वह स्वभावत: ''क्यों?'' और ''कैसे?'' का प्रश्न उठाया करता है। खोज करने की, जानकारी प्राप्त करने की इच्छा जिसे आध्यात्मिक भाषा में जिज्ञासा कहते हैं, मानव जीवन में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। जिज्ञासा का जिस प्रकार समाधान होता है, उसी ढाँचे में मनुष्य का जीवन ढलता जाता है। बालक के सामने कोई नई बात आती है तो वह उसके संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करना चाहता है। अभिभावकों से वाणी या आचरण द्वारा वह उस बात का जो उत्तर पाता है, उसे हृदय में धारण कर लेता है। यही धारणा कालांतर में जाकर संस्कार या विश्वास का रूप धारण कर लेती है। विभिन्न मनुष्यों के आचार-विचार, कार्य-कलाप, विश्वास भिन्न-भिन्न दिखाई पड़ते हैं, इसका कारण यह है कि उनके मन में जो जिज्ञासाएँ उत्पन्न होती रहीं हैं, उनका उत्तर उन्हें उसी रूप में मिला है। यह आवश्यक नहीं कि माता-पिता से ही यह समाधान हो, दूसरे लोगों से, पुस्तकों से या अपने आप विचार करने पर भी जिज्ञासाओं का समाधान होता है, फिर वही विश्वास जम जाते हैं।

अन्य जीव-जंतुओं के कार्यों और स्वभावों में उतना ज्यादा अंतर नहीं पाया जाता, पर मनुष्यों में यह असमानता असाधारण रूप से दिखाई पड़ती है। किस प्रकार की जिज्ञासा उठती है और उसका किस प्रकार समाधान होता है, यही विभिन्नता का प्रधान हेतु है। मनुष्य जन्म से तो स्वच्छ जल की भाँति होता है, पीछे उसकी जिज्ञासा का समाधान जिस ढंग से होता जाता है वैसे ही

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

विश्वास उसके मन में घर जमाते चलते हैं और उन विश्वासों की प्रेरणा से ही आचरण बनने लगते हैं। बहुत बार प्रयोग किया हुआ आचरण आदत बन जाती है और दीर्घकालीन धारणा संस्कार कहलाती है। मनुष्य की विशेषता उसके संस्कारों और आदतों की विशेषता है, यही एक-दूसरे के बीच में अंतर है। क्यों ? कैसे ? यही दो प्रश्न ऐसे हैं जो जीवन का निर्माण करते है, इन्हीं दो पहियों के रथ पर मनुष्य की मानसिक यात्रा चलती रहती है यह रथ परिस्थितियों के कारण जिधर चल पड़ता है, जीवन का वही स्वरूप बन जाता है।

किसी वस्तु की वास्तविकता को जानने के लिए तर्क का सहारा लेना पड़ता है। क्यों और कैसे की मीमांसा करने से ही मनुष्य सत्य के निकट पहुँच सकता है। इतना ही नहीं भौतिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास भी ज्ञान संपादन द्वारा ही संभव है। इसलिए अध्यात्म पथ में ज्ञानयोग की साधना सबसे पहली साधना है। "पहले किसी वस्तु के बारे में अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त करो, पूरी तरह खोज करो, विवेक के तराजू में ठीक तरह तोलो, पीछे उसे ग्रहण करो।" ज्ञान योग का मूल मंतव्य यह है। बिना जानकारी के, बिना बिचारे जो विचार या कार्य ग्रहण किए जाते हैं, वे निर्बल और अस्थिर होते हैं। वे जरा-सा आघात लगने पर टूटकर गिर सकते हैं, उनमें दृढ़ता नहीं होती और न वे अपना निश्चित फल ही उपस्थित करने में समर्थ होते हैं। "पहले जानो, पीछे करो" का नारा इसीलिए ऋषियों ने लगाया है और आत्मोन्नति के मार्ग पर चलने वाले को सबसे पहले अपने विषय को भली-भाँति जानकारी कर लेने के लिए कहा गया है। ज्ञान योग का यही तथ्य है।

बालक को पाठशाला में भेजा जाता है, जब वह बड़ा हो जाता है, तरुण हो जाता है तो व्यवसाय में प्रवृत्त होता है, वृद्ध होने पर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भजन-संन्यास, बालकों को हँसाने-खिलाने, प्रियजनों की देखभाल रखने, उन्हें अच्छी सम्मतियाँ देने आदि का कार्यक्रम रहता है। ठीक यही योजना अध्यात्म मार्ग में है। प्रारंभिक दीक्षित को जानकारी प्राप्त करनी चाहिए, यह ज्ञान योग है। अपनी दिल जमई अच्छी तरह कर लेने के उपरांत, अपने विचार और विश्वासों को दृढ़ एवं निश्चित करने के पश्चात् तदनुसार कर्तव्य करना चाहिए। आचरणों को उसी ढाँचे में ढालना चाहिए, यह कर्मयोग है। ज्ञान और कर्म के आधार पर परिपक्व मनोभूमि बनती है, उच्च दार्शनिक दृष्टिकोण बनता है, त्याग, सेवा, उदारता एवं प्रेम की अजस्र धारा अंतःकरण में से फूट निकलती है। उस प्रेम की धारा को ईश्वर की, नर-नारायण की उपासना में प्रवाहित करना, यह भक्तियोग है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि बालकपन, विद्यार्थी अवस्था ज्ञान योग का समय है। तरुणाई, कर्तव्यपरायणता कर्मयोग की स्थिति है। वृद्धावस्था, प्रेम, परोपकार और आत्मीयता के प्रसार की दशा भक्ति योग की अवस्था है। जैसे पार्थिव शरीर के तीन पग होते हैं, वैसे ही मानसिक शरीर के भी, बालपन, तरुणाई, वृद्धावस्था होते हैं। शरीर के साथ-साथ मन की अवस्थाएँ बदलने का कोई नियम नहीं है। यह हो सकता है कि किसी किशोर व्यक्ति की मनोभूमि इतनी ऊँची एवं ज्ञान से परिपूर्ण हो जाए, जो मानसिक वृद्धावस्था कही जा सके। स्वामी शंकराचार्य, महर्षि शुकदेव जी आदि अनेक महापुरुष छोटी अवस्था में ज्ञानवृद्ध हुए हैं, इसी प्रकार यह भी हो सकता है कि कोई व्यक्ति वृद्धावस्था तक आत्मिक ज्ञान से शून्य रहा हो और फिर उसकी रुचि इधर बढ़ी हो। ऐसे व्यक्ति शरीर से वृद्ध होते हुए भी योग मार्ग में बालक ही कहे जाएँगे। जैसे शरीर धारण करने पर अनिवार्यतः तीनों अवस्थाओं में होकर क्रमशः गुजरना पड़ता है, वैसे ही मानसिक अवस्थाओं को भी क्रम-क्रम से ही पार करना होता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कोई बच्चा बीच की सब अवस्थाओं को छोड़कर एकदम वृद्ध होते हुए नहीं देखा गया और न ही यह देखा गया है कि कोई आत्माभ्यासी ज्ञान और कर्म को छलांग कर एकदम भक्तियोग में प्रवृत्त हो जाए। प्रेम जिसको योग की भाषा में 'भक्ति' कहते हैं, एक ऐसी अवस्था है जो चिरकाल तक अंत:करण को स्वच्छ करते रहने के उपरांत उदय होती है। अंत:चेतना को जब सतत अभ्यास के बाद अत्यंत विस्तारित, स्वार्थ रहित बना लिया जाता है तो पराए और अपने का भेद कम हो जाता है, तब सच्चा प्रेम उदय होता है। यह एक दिन की साधना से नहीं हो सकता। इसके लिए प्रारंभिक तैयारी की बहुत दिनों तक आवश्यकता होती है। वह तैयारी क्रमश: आगे बढ़ने का प्रयत्न जारी रखने से ही हो सकती है।

भक्त बनने से पहले कर्तव्यपरायण होना आवश्यक है और कर्म में कुशल होने के लिए ज्ञान की जरूरत है। तात्पर्य यह है कि सबसे पहले सद्ज्ञान की आवश्यकता है। इसलिए आत्मविद्या के आचार्यों की सुनिश्चित सम्मति है कि पहले वास्तविकता को समझना चाहिए, पीछे कर्तव्य निश्चित करना चाहिए, यही ठीक तरीका है।

भारतवर्ष आध्यात्मिक अन्वेषणों की जन्मभूमि रहा है। यहाँ आत्मविज्ञान की करोड़ों वर्ष तक असाधारण खोजबीन हुई है, इसलिए इस देश की मनोभूमि में बड़ी भारी मात्रा में उर्वरा शक्ति उत्पन्न हो गई है। प्राचीनकाल में उच्चकोटि के दार्शनिकों, सच्चे ब्राह्मणों और तपस्वी-योगियों की बहुतायत थी, उस उर्वरा शक्ति का सदुपयोग किया जाता था और मानव जीवन को सुखी बनाने वाले आधार उत्पन्न किए जाते थे। पिछले कुछ हजार वर्षों से हम एक ऐसे दुर्भाग्य पूर्ण अँधेरे युग से होकर गुजरे हैं जिसमें सच्चे तत्त्वज्ञानियों का लोप-सा हो गया है। अच्छे उपजाऊ खेत को यदि कुछ वर्ष यों ही पड़ा छोड़ दिया जाए तो उसमें बड़े प्रबल वेग के साथ घास-पात,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

झाड़-झंखाड़ और दूसरे जंगली पौधे उपज पड़ते हैं। यदि कुछ अधिक दिनों तक इस जंगली उपज पर रोकथाम न लगाई जाए, उन्हें स्वेच्छा पूर्वक बढ़ने दिया जाए, तो वह भूमि सघन वन का रूप धारण कर लेगी। जिस जगह गेहूँ, ईख, कपास, तिलहन आदि उपजते थे, वहाँ ऊँटकटारे, करील, आक, बबूल आदि की भरमार दिखाई देने लगेगी। हमारे देश की आज ऐसी ही दशा है। पिछली शताब्दियों में इतने पंथ, संप्रदाय, फिरके, दल उपज पड़े हैं, जिनकी कुछ शुमार नहीं। ऐसे-ऐसे ऊट-पटांग विचार और विश्वास फैल पड़े हैं जिनका कोई हिसाब नहीं। आज हमारा अध्यात्मवाद एक अजायब घर बना हुआ है, जिसमें नकटे, बूचे, लंगड़े, लूले, काने-कुबड़े तरह-तरह के मत दिखाई पड़ते हैं। यह एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत और कट्टर विरोधी हैं, इनमें से हर एक अपने को सच्चा और बाकी सबको झूठा साबित करता है।

जिस मनुष्य के हृदय में सच्चे ज्ञान की पिपासा तीव्र गति से उठ रही है, जो सत्य का पुजारी और सत्य को प्राप्त करना चाहता है, वह इस सांप्रदायिक अजायब घर में कौतूहल के अतिरिक्त और क्या प्राप्त कर सकता है? 'अमुक पुस्तक या अमुक व्यक्ति का ऐसा मत है' केवल इसी आधार पर सत्य का पुजारी इस बात को ठीक नहीं मान सकता और न उसका अंधानुकरण करने के लिए ही तैयार हो सकता है। खासतौर से इस जमाने में जबकि मद्य, मांस, व्यभिचार, मुद्रा, झूठ, ठगी, अनुदारता, अहंकारता आदि तक को अध्यात्मवाद में सम्मिलित कर लिया गया है, कोई किसी भी प्रकार किसी पंथ का बिना समझे-बूझे अनुसरण कर सकता है। किंवदंतियाँ, कपोल-कल्पनाएँ, दंत कथाएँ, असंभव और अस्वाभाविक गाथाएँ, सच्ची जिज्ञासा का समाधान नहीं कर सकतीं। पहले जिस खेत में बहुमूल्य फलों का बाग था, उसमें यदि आज आक-ढाक खड़े हुए हैं तो उन्हें

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बहुमूल्य फलों का स्थान नहीं मिल सकता। सच्चे आत्मवाद के स्थान पर हरामखोर, निठल्ले, अकर्मण्य और ढोगियों ने जो बदमाशियाँ फैला रखी हैं, उनकी प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती।

ऐसी अविश्वस्त अवस्था आज अधिक परिमाण में है, पर थोड़े-बहुत परिमाण में वह सदा ही रहती आई है। कई अच्छे सिद्धांत भी कालांतर में अनुपयोगी हो जाते हैं अथवा उन उत्तम सिद्धांतों में अनुत्तम तत्त्वों के मिल जाने से उनका रूप बिगड़ जाता है। ऐसी दशा में उनके संशोधन एवं परिवर्तन की आवश्यकता होती है। यह संशोधन कार्य न्यूनाधिक मात्रा में सदा ही होता रहता है, पर आज तो उसमें बहुत बड़े परिमाण में शोधन की आवश्यकता है। यह कार्य ज्ञान योग द्वारा ही संभव है। ज्ञान योगी का कर्तव्य हंस के समान है। वह मिलावट को भली प्रकार परखने के उपरांत दूध पानी को अलग-अलग कर देता है और उसमें से केवल उपयोगी तत्त्व ही ग्रहण करता है। प्राचीनकाल के ज्ञान योगी अपने समय की मिलावटों और अव्यवस्थाओं का संशोधन करते थे। आज के ज्ञान योगी को अपने समय की उलझनें सुलझानी होंगी।

ज्ञान योगी 'सत्य का निष्पक्ष पुजारी' होता है, वह अंधविश्वास को छोड़कर विवेक को अपना प्रधान साधन बनाता है। विवेक की कसौटी पर कसे जाने के उपरांत जो बातें उचित जँचती हैं, उन्हें ही वह ग्रहण करता है। सत्य का प्राप्त होना विवेक द्वारा ही संभव है, इसलिए ज्ञानी विवेक को जगाने की साधना में प्रवृत्त होता है। मनोविज्ञान शास्त्र के विद्वान जानते हैं कि बुद्धि एकांगी वस्तु है, मन की इच्छा के अनुसार उसकी दौड़ होती है। यदि मन में किसी संप्रदाय के प्रति विशेष राग और दूसरे संप्रदाय के लिए विशेष द्वेष समाया हुआ है तो बुद्धि का कार्य यही होगा कि वह ऐसे तर्क और प्रमाण ढूँढ़ निकालें जिससे अप्रिय पक्ष का खंडन होता हो। इस

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रकार बुद्धि द्वारा मनोवांछा का समर्थन तो हो सकता है, पर सत्य की शोध नहीं हो सकती। निष्पक्ष बुद्धि जो उच्च अंत:करण में उत्पन्न होती है, विवेक कहलाती है, उसी के द्वारा सत्य को प्राप्त किया जाता है।

बुद्धि को सीमाबद्ध, अनुदार, संकीर्ण करने वाले तत्त्वों में अहंकार, अज्ञान, संगति, संस्कार, पैतृक-वृत्तियाँ, पक्षपात, स्वार्थ, तर्कहीन विश्वास ये प्रधान हैं। जीवन के प्रारंभ काल से ही ये तत्त्व मन के भीतरी भाग में अपना अड्डा जमाते रहते हैं और इतने मजबूत हो जाते हैं कि सामान्य बुद्धि उन्हें हटाने में समर्थ नहीं होती वरन उस बेचारी को इस मजबूत जमघट के दबाव में आकर केवल समर्थन करने के लिए विवश होना पड़ता है। अपनी अनुचित बात को उचित सिद्ध करने में, धूर्तता को छिपाने में, मन की इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए योजनाएँ बनाने और उन्हें कार्य रूप में परिणत करने में, बुद्धि का अधिकांश भाग लगा रहता है, इसलिए यह ऐसी मलीन और उथली हो जाती है कि सत्य की खोज में उसे बिलकुल असफल रहना पड़ता है। हम देखते हैं कि लोग अपनी बात को सत्य और दूसरे की बात को असत्य साबित करने के लिए खूब सिर फोड़ते हैं, पर हारता कोई नहीं, फैसला कुछ नहीं होता, मलिन-बुद्धि की लड़ाई में इससे अधिक और क्या आशा रखी जा सकती है?

ज्ञान योग के विद्यार्थियों को गुरु लोग उपदेश करते हैं कि एकांत स्थान में चित्त को एकाग्र करके आत्मा का ज्योति मात्र स्वरूप मस्तक में ध्यान करो, उसे विशुद्ध सच्चिदानंद स्वरूप अनुभव करो। यह ध्यान अधिक मनोयोगपूर्वक अधिक समय तक करना चाहिए। साथ ही अहंकार, अज्ञान, संगति जन्य संस्कार, पैतृक वृत्तियाँ, पक्षपात, स्वार्थ, तर्कहीन विश्वास आदि मनोविकारों की गहराई को भली प्रकार समझते हुए उन्हें जड़ से उखाड़कर अलग रख देना चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ध्यान द्वारा अपनी स्थिति को शरीर और मन से ऊँचा उठाकर विशुद्ध आत्मा में अनुभव करना चाहिए। यह स्थिति जो स्वच्छ-निस्वार्थ बुद्धि से उत्पन्न होती है, वही विवेक है। उसके द्वारा जो निर्णय होता है, वह सत्य के अधिकतम निकट होता है।

उपर्युक्त साधना को पूर्वकालीन साधक लोग तपोवनों में जाकर अधिक व्यवस्था पूर्वक करते थे। हम अपने पाठकों को उपर्युक्त साधना का सारांश इस प्रकार बताते हैं कि वे अपने को न्यायमूर्ति, निष्पक्ष जज अनुभव करें। अपने निजी स्वभावों, संस्कारों और हानि- लाभों का विचार बिलकुल हटा दें । पक्ष और निष्पक्ष की वास्तविकता पर गंभीर और सहानुभूति पूर्ण दृष्टि से विचार करें। तदुपरांत देश, काल, पात्र का ध्यान रखते हुए जो निर्णय ठीक बैठता हो, उसे ही स्वीकार करें, उसे ही ग्रहण करें।

इस दृष्टि से विचार करने पर, गंभीर विवेचना करने पर साधक को अपने में और दूसरों में कभी-कभी भारी त्रुटियाँ दीख पड़ती हैं, इन त्रुटियों की प्रचुरता और भयंकरता को देखकर वह डर जाता है, सिटपिटा जाता है और सोचता है कि कहीं मेरा निर्णय ही तो दोषपूर्ण नहीं है? बड़े-बड़े लोग जिस कार्य को करते हैं और जिसका समर्थन करते हैं, वह बात इतनी दोषपूर्ण कैसे हो सकती है? यह असमंजस निरर्थक है। गीता में भगवान कृष्ण ने अर्जुन के इसी असमंजस को दूर किया है। विशाल सेना समूह जिनके साथ लड़ने को खड़ा है, भीष्म से ब्रह्मचारी, द्रोणाचार्य से शस्त्र विद्या विशेषज्ञ, कर्ण से दानी जिन कौरवों के साथ हैं; अर्जुन सोचता है कि उस पक्ष का विरोध करना उचित नहीं। कृष्ण उसे समझाते हैं कि सत्य के आगे व्यक्तियों का कोई मूल्य नहीं, चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न हों, ज्ञानी की यही दृष्टि रहती है। वह लौकिक दृष्टि से अकेला भले ही हो, पर विवेक उसके साथ में इतना बड़ा सहायक है, जिसकी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तुलना लाखों पुस्तकों और करोड़ों व्यक्तियों से नहीं हो सकती। यदि विवेक कहे कि अमुक बात ठीक है तो उसे ही ग्रहण करना चाहिए। भले ही अनेक लोग प्रतिकूल कहते या करते हों। ज्ञानयोग का संदेश है—"सत्य को ग्रहण करो, विवेक पर अवलंबित रहो, औचित्य पर डट जाओ, अंत:करण में बैठा हुआ परमात्मा जो आदेश करे उसे सुनो और तदनुकूल आचरण करो।" ज्ञानी का यही कर्तव्य पथ है। वह बालू में से चाँदी निकालता है और रेत को छोड़ देता है, गन्ने में से रस ग्रहण करता है और छिलके फेंक देता है, नाना प्रकार के विचार और विश्वासों में से विवेक द्वारा सत्य को ही स्वीकार करता है।

ज्ञानी की अपनी कुछ निजी मान्यताएँ भी होती हैं। वह जानता है कि मनुष्य को अब तक जो विभिन्न विषयों में जानकारी प्राप्त है, वह बहुत ही सीमित है, बहुत ही अधूरी है, वह महान सत्य का एक असंख्यवाँ एक धुंधला भाग मात्र है। मनुष्य ने शरीर विज्ञान की काफी खोज की है, किंतु अभी तक यह मालूम नहीं हो सका कि तिल्ली का वास्तविक कार्य क्या है? औषधि विज्ञान की बहुत कुछ ढूँढ़ खोज हुई है, पर किसी छोटे-से-छोटे रोग की अभी तक कोई शर्तिया दवा न निकल सकी। अनेक संप्रदायों की सृष्टि हुई, पर उनमें से एक भी सुख-शांति का आविर्भाव न कर सका। भूगर्भ विद्या, खगोल विद्या, प्राणिशास्त्र के संबंध में बहुत-सी बातें जान ली गई हैं, पर अभी जो जानना बाकी है, वह प्राप्त जानकारी की अपेक्षा करोड़ों गुना है। धर्मशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र के बारे में अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं, तो भी वे अधूरे हैं। कर्मफल का मिलना न मिलना, ईश्वर का होना न होना, मृत्यु के उपरांत क्या होगा, यह प्रश्न आज भी उतने ही जटिल, पेचीदा और उलझे हुए पड़े हैं जितने कि यह मनुष्य जाति के आरंभिक विकास के समय थे। मनुष्य की अल्पज्ञता को ध्यान में रखते हुए ज्ञान योगी सदा अपने मस्तिष्क को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आगे की खोजों के लिए खुला रखता है। वह किसी बात में इसलिए दुराग्रह नहीं करता कि पुराने लोग ऐसा कह गए हैं। पुराने लोग भी आखिर मनुष्य ही थे, उनमें भी हमारी ही तरह अपूर्णता होना संभव है। इन बातों को ध्यान में रखता हुआ वह अपने ज्ञान को बढ़ाता है, सतर्क रहता है, भूलों को सुधारता है और दुनिया के कबाड़खाने में से परख-परखकर चुन-चुनकर उपयोगी सिद्धांतों को स्वीकार करता है और उन्हें ही आचरण में लाता है। अपनी गलती मानने, उसे सुधारने और विवेकयुक्त सिद्धांतों को स्वीकार करने में उसे जरा भी झेंप या हिचकिचाहट नहीं होती।

निरंतर विद्याध्ययन, सद्ग्रंथावलोकन, सत्संग, श्रवण, मनन करना, विश्व की समस्याओं से परिचित रहना आदि उपायों द्वारा अपने मस्तिष्क को अधिक सूक्ष्म एवं व्यावहारिक बनाना, यह ज्ञान संचय का सर्वविदित तरीका है। अपने आप किसी विषय पर गंभीरतापूर्वक विचार करने की शक्ति उर्वर और सुसंस्कृत मस्तिष्कों में ही होती है और सुतीक्ष्ण मस्तिष्क अधिक अध्ययन, श्रवण तथा मनन से बनता है, इसलिए ज्ञानी का यह कर्तव्य हो जाता है कि मानव जीवन से संबंध रखने वाली समस्याओं के संबंध में जितनी अधिक जानकारी संग्रह कर सके, करे।

स्थूल बुद्धि की भूमिका में से नीचे उतरना, अपने दृष्टिकोण को दार्शनिक बनाना, ज्ञानयोग की व्यावहारिक शिक्षा है। दुनियादार आदमी संसार को उस रूप में देखता है, जिस रूप में कि उसकी इंद्रियाँ देखती हैं, आँखों से जो वस्तु जैसी दिखाई पड़ती है, जिह्वा से जैसा स्वाद आता है, स्पर्श करने पर जैसी गुदगुदी उठती है, उसी रूप में संसार को वह समझता है। सिनेमा में आँखों को बड़ा मजा आता है, मिठाई खाने में जीभ खूब प्रसन्नता अनुभव करती है, मैथुन में स्पर्शेंद्रिय को गुदगुदी होती है। अज्ञानी इतना ही जानता है। वह

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

संसार को इंद्रियों की कसौटी पर कसता है और उनके द्वारा जो वस्तु जैसी प्रिय-अप्रिय जँचती है, उसे वैसा ही मानता है, किंतु ज्ञान इससे संतुष्ट नहीं होता। वह इंद्रियों पर निर्भर नहीं रहता और न मन के वश में काम करने वाली बुद्धि पर विश्वास करता है, उसे इस झूठी दुनिया में एक विवेक की कसौटी विश्वसनीय जँचती है और वह इसी पर पूर्णतया अवलंबित रहता है।

जबकि दुनियादार आदमी इस जगत को अपनी विलास भूमि और जीवन को खाने-पीने, मौज उड़ाने का साधन मानता है, तब दार्शनिक विचार रखने वाला मनुष्य संसार की प्रत्येक वस्तु को ईश्वर की महत्ता से पूरित देखता है, संसार को ईश्वर की सुरम्य वाटिका अनुभव करता और तपोभूमि की आदर भावना से इस विश्व में कर्तव्य पालन की कठोर तपस्या करता है। जीवन उसके लिए एक ईश्वरीय धरोहर है। उसका एक-एक क्षण वह अपने परम लक्ष्य की प्राप्ति में लगाता है। वह बहिर्मुखी दृष्टि से दुनिया को नहीं देखता वरन प्रत्येक वस्तु और कार्य का सूक्ष्म आध्यात्मिक दृष्टि से निरीक्षण करता है, उसी तरीके से उन पर विचार करता है और वैसी ही अनुभूति ग्रहण करता है।

एक ही मनुष्य विभिन्न लोगों को विभिन्न प्रकार का दिखाई पड़ता है। स्त्री उसे प्राणप्रिय पति की दृष्टि से देखती है, कन्या पिता का भाव रखती है, माता-पिता उसे स्नेह-भाजन पुत्र समझते हैं, बहिन के लिए वह भाई है, मित्रों के लिए अच्छा सखा है, दुकानदार के लिए ग्राहक है, विरोधी के लिए शत्रु है, राजा के लिए प्रजा है, सिंह के लिए एक स्वादिष्ट भोजन है, चींटी के लिए एक चलता-फिरता पर्वत है, इस प्रकार एक ही मनुष्य के संबंध से इतनी पृथक दृष्टियाँ रखी जाती हैं कि उनमें आपस में भारी अंतर होता है। जीवन और जगत के बारे में भी ज्ञानी और अज्ञानी की दृष्टि में इसी प्रकार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जमीन-आसमान का अंतर होता है। अज्ञानी हर वस्तु को स्वार्थ, भोग, लालच भरी दृष्टि से देखता है, किंतु ज्ञानी के लिए इस विश्व का एक-एक परमाणु त्याग, सेवा, प्रेम, उपकार, कर्तव्य और पवित्रता का क्षेत्र है। अज्ञानी को वस्तु का सौंदर्य स्वार्थ के कारण दिखाई देता है। जो वस्तु जिस मात्रा में उसकी स्वार्थ पूर्ति करती है, वह उसे उतनी ही प्रिय लगती है; किंतु दार्शनिक की दृष्टि में विश्व का प्रत्येक परमाणु ईश्वरीय अखंड ज्योति से जगमगा रहा है, इसलिए वह सौंदर्य की खान है, हर वस्तु उसे सुंदर-ही-सुंदर दिखाई पड़ती है। जीवधारियों को वह ईश्वर की चलती-फिरती प्रतिमा देखता है। उसके लिए अपने को उत्सर्ग कर देने की इच्छा करता रहता है। अपने आपको ईश्वर का अमर राजकुमार मानता है और अपने आचरण तथा कार्यों को अपने गौरव के अनुरूप ही रखने का प्रयत्न करता है। अज्ञानी को स्वार्थ और भोग का नशा चढ़ा रहता है, वह अविवेक में अंधा होकर इंद्रिय तृप्ति में जुटा रहता है। ज्ञानी को सत्य की शोध की लगन लगी रहती है, संसार की हर वस्तु उसे ऐसी प्रतीत होती है, मानो उसकी कर्त्तव्यपरायणता की परीक्षा लेने के लिए खड़ी हुई है। वह अपने परीक्षकों को सामने खड़ा देखकर हर घड़ी सावधान रहता है और सतर्क रहता है कि कहीं मैं फेल न हो जाऊँ। उसका दृष्टि बिंदु भोग या स्वार्थ का नहीं वरन कर्तव्यपरायणता का रहता है, हर वस्तु के प्रति अपने पवित्र उत्तरदायित्व को ठीक रीति से पूरा करने के लिए वह हर घड़ी कमर कसकर युद्धरत सैनिक की तरह जागरूक रहता है। इसी प्रकार अपने जीवन की ईश्वरीय धरोहर को उसी के कामों में उसी के आदेश पूर्ति में व्यय करता है। इस दिशा में भी वह जागरूक रहता है कि कहीं ईश्वर की अमानत में खयानत न हो जाए, जिस कार्य के लिए मुझे भेजा गया है उसे छोड़कर कहीं प्रपंच में न फँस

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जाऊँ। सावधानी, सतर्कता, कर्तव्यपरायणता, जागरूकता, सत्य-परायणता, ज्ञानी के प्रधान कार्य रहते हैं।

गीता में कहा गया है कि जब साधारण मनुष्य रात्रि समझकर सोते रहते हैं, तब योगी जागता रहता है। पलंग पर पड़कर सोता या जागता नहीं, वरन अपनी विचार दृष्टि को निद्रित या सजग रखता है। अज्ञानी लोगों के लिए संसार वैसा ही है जैसा कि आँख, जिह्वा, त्वचा आदि स्थूल इंद्रियाँ बताती हैं। वह इससे अधिक कुछ नहीं सोचता। सूक्ष्म विचारकता को सोया का सोया ही पड़ा रहने देता है, किंतु ज्ञानी अंत:करण की विवेक दृष्टि से कार्य-कारण की गंभीरता ढूँढ़ता है, विश्व को वास्तविक रूप से देखता है और तुच्छ स्वार्थों को छोड़कर अपने महान उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए अत्यंत सावधानी के साथ जुटा रहता है।

ज्ञानयोग अध्यात्म मार्ग की प्रारंभिक साधना है, जिस पर अवलंबित होना हर एक प्राथमिक जिज्ञासु के लिए अनिवार्यत: आवश्यक है। हम अपने पाठकों को यह सलाह देंगे कि वे आत्मोन्नति के पथ पर कदम बढ़ाते हुए वास्तविकता को समझने के लिए ही उत्कंठा के साथ प्रयत्नशील रहें, अज्ञान के अँधेरे में से निकलकर ज्ञान के प्रकाश में आएँ। सत्य को समझने तथा प्राप्त करने का उद्योग करें।

□

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कर्मयोग

गीता ने 'कर्म की कुशलता' को योग बताया है। वास्तव में कर्म एक ऐसा तत्त्व है जिसका उपयोग हर एक को अनिवार्यत: करना पड़ता है। शरीर और मन की रचना ही इस प्रकार हुई है कि उन्हें हर घड़ी काम में जुटा रहना पड़ता है। जब नींद में पड़कर हम सो जाते हैं तो भी शरीर एवं मन की भीतरी क्रियाएँ बराबर जारी रहती हैं! यदि एक क्षण के लिए भी यह रुक जाए तो बस मृत्यु ही समझिए। निद्रावस्था के अतिरिक्त शेष समय में शरीर की बाह्य क्रियाएँ भी जारी रखनी पड़ती हैं। शारीरिक और मानसिक भूखें ऐसी प्रबल हैं कि वे बलात् मनुष्य को कार्य करने के लिए खींच ले जाती हैं, उनसे बचने का न तो कोई उपाय है और न कुछ लाभ।

कर्म का कुछ-न-कुछ परिणाम अवश्य होता है। ऐसा कोई कर्म नहीं जो निष्फल जाता हो, निश्चयपूर्वक उसका परिणाम उपस्थित होता ही है। मनुष्य को प्रकृति के नियमों की अभी बहुत ही कम जानकारी प्राप्त हुई है, उस अधूरी जानकारी के आधार पर यह पता लगाना कठिन है कि इस कार्य का निश्चयपूर्वक यही फल होगा। नदी में तैरने के लिए एक तैराक कूदता है और सोचता है कि मैं तैरता हुआ दूसरे किनारे पर पहुँच जाऊँगा, पर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वह अपने प्रयत्नों में सफल न होकर बीच में ही डूब जाए और दूसरा किनारा प्राप्त न हो सके। एक व्यापारी लाभ कमाने के लिए व्यापार करता है, पर यह भी संभव है कि कोई ऐसे कारण उपस्थित हो जाएँ कि लगाई गई पूँजी भी हाथ से चली जाए। एक डॉक्टर रोगी को रोग मुक्त करने के लिए बहुत मनोयोग के साथ चिकित्सा करता है, पर यह संभव है कि रोग उलटा बढ़ जाए या रोगी की मृत्यु हो जाए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करोड़ों वर्ष से मनुष्य जाति जो अनुभव एकत्रित करती चली आ रही है, उसके आधार पर यद्यपि बहुत अंशों में यह मालूम हो गया है कि अमुक प्रकार के कामों का परिणाम अमुक प्रकार का होता है—जैसे पाप का फल दुःख तथा पुण्य का फल सुख होना जान लिया गया है तो भी ऐसे प्रसंग आते देखे गए हैं कि पाप से सुख और पुण्य से दुःख मिलता है। ऐसे अवसरों पर बुद्धि को विचलित करने की जरूरत नहीं है, कारण यही है कि अभी हर एक कर्म विषयक एक मोटी रूपरेखा ही मालूम हो सकी है, उसमें जो छोटी-छोटी बारीकियाँ और पेचीदगियाँ हैं, उनका ठीक-ठीक ज्ञान अभी भी प्राप्त नहीं हुआ है। आगे चलकर शायद मानव बुद्धि कर्मफल विषयक उन सूक्ष्म रहस्यों का भी पता लगा ले जो अभी तक बहुत ही उलझे हुए और रहस्यमय बने पड़े हैं।

दो-चार दिन के अभ्यास से कोई व्यक्ति मोटर चलाने की क्रिया जान लेता है और उन मोटे नियमों तथा चलाने-बंद करने के पुर्जों का परिचय प्राप्त करके मोटर को चला ले जा सकता है और निश्चित स्थान पर लेकर पहुँच जाता है, परंतु यदि मशीन के किसी भीतरी भाग में कोई ऐसी बारीक खराबी उत्पन्न हो जाए जिसके कारण मोटर बीच में ही रुक जाए तो नौसिखिए ड्राइवर के लिए एक बड़ी उलझन भरी बात होगी। वह सोचेगा कि मैंने चलाने का जो ज्ञान प्राप्त किया है, वह कहीं झूठ तो नहीं है। वास्तव में उसका ज्ञान झूठा नहीं है वरन अपूर्ण है। जितना कुछ उसने सीखा है वह तो ठीक है, पर जो सीखना बाकी है वही कमी है। यदि वह ड्राइवर इंजन के बारीक कलपुर्जों के बारे में सारे नियमोपनियम जानता और खराबी को ठीक कर लेने के साधन उसके पास होते तो वह रास्ते में रुक गई मोटर को सँभाल लेता और निश्चित स्थान तक जा पहुँचता।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उस नौसिखिए ड्राइवर की अवस्था में ही आज मनुष्य जाति है। उसे मोटे-मोटे नियम तो मालूम हैं कि ब्रह्मचर्य से आरोग्य वृद्धि होती है और वीर्यपात से स्वास्थ्य गिरता है। अधिकांश में यह नियम ठीक भी उतरता है, पर ऐसे उदाहरण भी कम नहीं हैं कि ब्रह्मचारी दुर्बल एवं अस्वस्थ रहे और व्यभिचारी लोहे के लट्ठे की तरह मजबूत, स्वस्थ और बलवान रहे। रजवाड़ों में हमने अनेक राजपूत ऐसे देखे हैं, जिनकी दर्जनों विवाहिताएँ और पच्चीसियों रखेलियाँ रहती हैं, परले सिरे के व्यभिचारी हैं, एक-एक दिन में चार-चार बार वीर्यपात करते हैं। मद्य, मांस आदि स्वास्थ्य विरोधी वस्तुएँ खाते हैं, फिर भी लोहे के लट्ठे की तरह स्वस्थ और मजबूत हैं। ऐसे उदाहरणों को देखकर ब्रह्मचर्य का खंडन या व्यभिचार का मंडन नहीं कर सकते। केवल इतना ही कह सकते हैं कि स्वास्थ्य संबंधी कुछ अन्य ज्ञात-अज्ञात नियम भी हैं जिनके कारण ब्रह्मचर्य की उपयोगिता को पूर्णत: फलितार्थ होने में कभी-कभी बाधा उपस्थित हो जाती है। उपर्युक्त विपरीत उदाहरणों के होते हुए भी ब्रह्मचर्य का ही समर्थन करना पड़ेगा, क्योंकि अधिकांश में ब्रह्मचर्य की उपयोगिता सिद्ध करने वाले ही उदाहरण पाए जाते हैं।

उपर्युक्त पंक्तियों में पाठकों को हमने यह बताने का प्रयत्न किया है कि कर्म करना जीवन का अनिवार्य नियम है। कर्म का फल अवश्य ही मिलता है, पर निश्चयात्मक रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक कर्म का अमुक समय तक, अमुक प्रकार का फल ही हो जाएगा, उसमें अपवाद उपस्थित हैं और बहुत बड़े परिमाण में होते हैं। पुराने कर्म आगे फल देते हैं या अब के कर्म आगे फल देते हैं या ईश्वर की मर्जी ऐसी ही है या भाग्य का ऐसा ही लेखा है, इस प्रकार के अनेक उत्तरों से इन अप्रत्याशित घटनाओं का समाधान किया जाता है और किया जा सकता है। हम उनकी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

गहराइयों में नहीं उतरना चाहते । हमें तो यही कहना है कि कारण कुछ भी क्यों न हों, पर प्रत्यक्ष बात यह है कि सदैव मन चाहे अवसर प्राप्त नहीं होते। ठीक तरह से निर्धारित नियमों का पालन करते हुए भी उसका फल कई बार ऐसा होता है कि भारी संदेह, उलझन, गड़बड़ और बेचैनी उत्पन्न कर देता है। मानव जाति चाहती है कि ऐसा न हो, कोई ऐसे नियम मालूम हो जाएँ जो बिलकुल अपवाद रहित निकलें, इस इच्छा की पूर्ति के लिए जी-तोड़ परिश्रम हो रहे हैं, दिन-दिन प्रगति हो रही है, प्रकृति के गूढ़ रहस्यों का धीरे-धीरे उद्घाटन हो रहा है, पर अभी तक जो कुछ प्राप्त हो सका है वह बहुत ही कम है, बहुत ही अपूर्ण है, बहुत ही अपर्याप्त है। प्रकृति नियम रहित है, ऐसी बात नहीं। ईश्वरीय शासन में अव्यवस्था नहीं है, पर उस व्यवस्था का रहस्य बहुत ही दुरूह होने के कारण 'नेति, नेति' कहकर ही संतोष करना पड़ता है।

जब कर्मफल इतना संदिग्ध और अनिश्चित है तो उस पर अवलंबित रहकर कार्य करना अपने को दुःख और निराशा के समुद्र में धकेल देने के बराबर है। भगवान कृष्ण ने गीता में निष्काम कर्मयोग का उपदेश दिया है। वे कहते हैं कि फल की आशा छोड़कर कर्म करना चाहिए। इस कथन का तात्पर्य यह है कि काम तो मन लगाकर करो, पूरे उत्साह से करो, पर फल की लालसा में उतावले मत बनो। कई व्यक्ति निष्काम कर्म का गलत अर्थ करते हैं। उनका खयाल होता है कि बिना विचारे, बिना आगा-पीछे सोचे, बिना हानि-लाभ का विवेक किए यों ही अंधाधुंध काम करते जाना चाहिए और जो कुछ उलटा-सीधा नतीजा निकले, उसी से संतुष्ट रहना चाहिए। यह अर्थ बिलकुल गलत, असंभव और मानव स्वभाव के सर्वथा विपरीत है। कार्य की उत्पत्ति कारण से होती है, बिना किसी लाभ की आशा से कोई मनुष्य कार्य को कैसे कर सकता है ?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बिना किसी स्वार्थ के एक कदम भी किसी दिशा में नहीं उठ सकता, फिर यह सोचना मूर्खता है कि फल का विचार किए बिना कर्म किया जाएगा। यदि बेसमझे कोई काम शुरु भी किया जाए तो उसे उत्साह दृढ़ता के साथ विघ्न बाधाओं का मुकाबला करते हुए बराबर जारी रखना तो सर्वथा असंभव ही समझना चाहिए।

किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसके परिणाम के संबंध में भली प्रकार विचार करना चाहिए, खूब बारीकी के साथ लाभ निरूपण करना चाहिए। यदि सब प्रकार उस कार्य का करना उचित और हितकारी जान पड़े तो ही उसे करने के लिए कदम उठाना चाहिए, किंतु जब उसे आरंभ कर दिया जाए तो फल की लालसा में हर घड़ी लार टपकाते रहने की अपेक्षा उस कार्य प्रणाली में इतना व्यस्त हो जाना चाहिए कि फल की ओर ध्यान ही न जाए। छोटे बालक आम की गुठली मिट्टी में गाड़ देते हैं, उस पर जरा-सा पानी छिड़कते हैं, फिर दो चार मिनट बाद ही उस गुठली को उखाड़कर देखते हैं कि अभी उसमें से अंकुर निकला या नहीं ? वे चाहते हैं कि हमारी बोई हुई गुठली बहुत जल्द बड़ा भारी विशाल वृक्ष बन जाए, जिस पर मनों मीठे-मीठे फल लगें और हम उन्हें भरपेट खाएँ। फल की लालसा इतनी तीव्र होती है कि उन्हें एक-एक क्षण भारी पड़ता है। गुठली स्वाभाविक रीति से उपजकर विशाल वृक्ष का रूप धारण करे इतने समय तक प्रतीक्षा करने का धैर्य उनमें नहीं होता, इसलिए घंटे-दो-घंटे या एक-दो दिन तो वे गुठली को उलट-पलटकर देखते हैं, पीछे उधर से निराश होकर उस मधुर फल खाने के स्वप्न को दुःखपूर्वक छोड़ देते हैं, कभी गुठली में दोष लगाते हैं, कभी जमीन या पानी को कोसते हैं, कभी भाग्य पर टीका-टिप्पणी करते रहते हैं, कभी अपने को अयोग्य ठहराते हैं। इसी प्रकार वे बालक दूसरा काम शुरु करते हैं और इसी क्रम से उतावली में उसे भी छोड़ देते

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं, यही क्रम चलता है, उनके हाथ केवल असफलता और उससे उत्पन्न होने वाली निराशा तथा बेचैनी ही लगती है। अंत में वे बहुत ही बेजार और किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं।

फल की आशा पर निर्भर रहने वालों को ठीक इन बालकों का ही उदाहरण बनना पड़ता है। फल प्राप्त होने के लिए जो सुनहरी सुखद कल्पनाएँ बना रखी हैं यदि उनके चरितार्थ होने में विलंब लगता है तो यह उतावला मनुष्य धैर्य छोड़ देता है, अधीर होकर दूसरों पर दोषारोपण करता है, सिर धुनता है, हाथ मलता है, पछताता है, दु:खी होता है और न जाने क्या-क्या न करने योग्य करता है या करने की इच्छा करता है।

कहते हैं कि लालच मनुष्य को अंधा बना देता है। अंधे को मार्ग नहीं सूझ पड़ता। जो आदमी पैसा या यश उपार्जित करने के लिए छटपटा रहा है, वह लालच के मारे न करने योग्य कार्यों को कर बैठता है और फिर उसका दुखदाई परिणाम भोगता है। एकदम धनी बन जाने की इच्छा से लोग चोरी-डकैती आदि भयानक कार्यों में प्रवृत्त हो जाते हैं और फिर लोक-परलोक में दुख भोगते हैं। लालच की लगन इतनी प्रबल होती है कि उसी में बुद्धि का अधिकांश भाग खप जाता है। सुखद कल्पनाओं के खयाली महल बनाने में इतनी अधिक रुचि हो जाती है कि कार्य करने के तरीके में त्रुटि रहने लगती है, उसमें पूरा ध्यान और पूरी शक्ति का संयोग नहीं हो पाता। जितनी सावधानी रखी जानी चाहिए उतनी नहीं रह पाती, कार्यप्रणाली में जो दोष आ गए हैं और काम में जो बिगाड़ होने आरंभ हो गए हैं, उन तक दृष्टि नहीं पहुँच पाती। फलत: छोटा छिद्र बड़ा होकर एक दिन सारा गुड़-गोबर कर देता है।

शेखचिल्ली की कहानी सबको मालूम है। वह चार पैसे की मजदूरी करने चला था, सोच रहा था इन पैसों से अंडा लूँगा, अंडे से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मुर्गी होगी, उसके बच्चे बढ़ेंगे, उनसे बकरी, फिर गाय, फिर भैंस लूँगा। उसे बेचकर शादी करुँगा, बच्चे होंगे, उन्हें खिलाते हुए 'उहुंक' कहकर दुत्कार दिया करुँगा। दुत्कारने की चेष्टा करते हुए शेखचिल्ली के सिर पर रखी हुई हांडी गिर पड़ी, मजदूरी मिलना तो दूर बेचारे पर बुरी तरह मार पड़ने लगी। हम लोग शेखचिल्ली पर हँसते हैं कि मूर्ख फल के लालच में इतना व्यस्त हो गया कि अपने काम की सावधानी भूल गया, जिससे बच्चे खिलाने का स्वप्न तो दूर रहा उलटे मार खानी पड़ी, परंतु हमारा इस तरह का हँसना बेकार है, क्योंकि प्रकारांतर से करीब-करीब ऐसा ही हमारा आचरण होता है। फल की आशा में इतने तल्लीन हो जाते हैं कि कार्य प्रणाली में अनेक दोष और त्रुटियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। परिणाम की जो इच्छा की जाती है, उससे उलटा नतीजा सामने आ जाता है।

कर्मयोग का पूरा नाम निष्काम कर्मयोग है, जिसका अर्थ होता है—फल की आसक्ति छोड़कर कर्म करना। यहाँ इस भेद को भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि इच्छा का नहीं आसक्ति का निषेध किया गया है। परिणाम की इच्छा के बिना तो कोई कार्य किया ही नहीं जा सकता। स्वाभाविक इच्छा तो अवश्यंभावी है और आवश्यक भी है। निषेध उस आसक्ति का है, जिसके लोभ में कार्य प्रणाली के गुण-दोषों की ओर से आँखें बंद हो जाती हैं। दूसरे शब्दों में इस तथ्य को यों कहा जा सकता है कि भविष्य के मनसूबे बाँधते रहने की अपेक्षा वर्तमान काल का तत्परतापूर्वक उपयोग करो। कर्मयोग का संदेश है कि आज के कार्य में पूरी तरह तन्मय हो जाओ, आज जो काम सामने पड़ा हुआ है उसे समस्त बुद्धिमत्ता, दिलचस्पी, सावधानी और मेहनत के साथ करो, उसमें इतने अधिक तत्पर हो जाओ। कि कल की चिंता उसके सामने गौण हो जाए। उसका ध्यान ही न आने पाए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इस प्रकार जब संपूर्ण इच्छाशक्ति के साथ आज का काम किया जाएगा तो निस्संदेह उसका फल आशातीत सफलतायुक्त होगा।

ऐसी बात नहीं कि निष्काम कर्म करने वाले को फल ही न मिलता हो। वह तो मिलना ही है, मिलकर रहेगा ही, कर्म निष्फल नहीं जा सकता, सच तो यह है कि निष्काम कर्म करने से कई गुना अधिक और अच्छा फल मिलता है। अधिक और उत्तम फल प्राप्त करने का एक वैज्ञानिक तरीका अनाशक्ति है। गणित के त्रैराशिक सिद्धांत की तरह यह स्पष्ट है कि जब कल के मनसूबे छोड़कर आज के कार्य पर जुट जाया जाएगा तो सारी शक्ति का एक ही ओर उपयोग होगा और जो कार्य अधिक शक्ति के साथ किया जाएगा वह अधिक फलदायक होगा। अनासक्त कर्म निस्संदेह अधिक प्राप्त करने का एक उत्तम तरीका है।

दिलचस्पी को फल की उलझन में से निकालकर कार्य प्रणाली में लगा देना, अपनी हर घड़ी को आनंदमय बना लेना है। एक नौकर अपने काम पर जाते ही छुट्टी का समय गिनने लगता है, थोड़ी-थोड़ी देर बाद घड़ी देखता है कि कब यहाँ से छुटकारा मिलेगा। उसका मन काम में नहीं लगता, बार-बार जी ऊबता है, अधूरे मन से जैसे-तैसे काम करता है। क्या आप सोचते हैं कि इस तरीके से वह अपना काम अच्छा और पूरा कर सकेगा? कदापि नहीं, इस नौकर के कामों का जरा निरीक्षण कीजिए कि बहुत ही अधूरे, भद्दे और खराब होंगे। कारण यह है कि उसने अपनी आधी शक्ति तो छुट्टी की प्रतीक्षा में गँवा दी, शेष आधी से तो आधा अधूरा काम ही हो सकता है। दिलचस्पी एक समय में दो स्थानों पर नहीं रह सकती। यदि छुट्टी में मन अटका है तो सामने का काम बेगार की तरह लगेगा, उसमें चित्त ऊबा रहेगा। भार की तरह जो कार्य किया जा रहा है, उसमें रस भला किस प्रकार आ सकता है? ऐसा व्यक्ति

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

छुट्टी के समय में प्रसन्न जरूर होगा, किंतु शेष समय को कुड़कुड़ाते हुए आनंद रहित व्यतीत करेगा।

दूसरा नौकर इसके विपरीत स्वभाव का है, उसे अपना काम खेल की तरह मनोरंजक प्रतीत होता है, पूरी दिलचस्पी के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करता है, उस काम में ही पूरा आनंद लेता है और इतना तन्मय हो जाता है कि छुट्टी के समय की ओर ध्यान भी नहीं देता। ठीक समय पर छुट्टी इस नौकर को भी मिलेगी, साथ-साथ चौगुना आनंद भी प्राप्त होगा। (१) काम के घंटे आनंद और मनोरंजन के साथ बीत जाएँगे। (२) काम इतना बढ़िया होगा कि देखने वाले प्रशंसा करेंगे और आदर देंगे, (३) अपनी योग्यता, बुद्धि और शक्ति सतेज होगी, (४) मालिक खुश रहेगा, पुरस्कार और तरक्की देगा। बस, ठीक यही अनासक्त कर्म का रहस्य है। छुट्टी की प्रतीक्षा में उलझा रहने वाला नौकर आसक्ति के कारण अपने को उद्विग्न रखता है, काम खराब करता है, अयोग्य बनता है, असफल रहता है, निंदा का पात्र बनता है और हानि उठाता है, किंतु काम में दिलचस्पी लेने वाला अनासक्त नौकर चौगुना फायदा कर लेता है। यही कर्म कौशल है, इसी क्रिया-कुशलता को गीता ने कर्मयोग का सुंदर नाम दिया है।

यह पहले बताया जा चुका है कि सदा ही इच्छित फल प्राप्त नहीं होता। किसी अज्ञात कारण से ऐसे अवसर आ सकते हैं कि प्रयत्न करते हुए भी इच्छित फल न मिले वरन उसका उलटा परिणाम उत्पन्न हो जाए। ऐसी दशा में जो व्यक्ति मुद्दतों से आशाओं के महल बनाए बैठा है उसका दिल टूट जाएगा, निराशा का एक भारी झटका लगेगा और उस शोक में संभव है अपनी बुद्धि या तंदुरुस्ती या जिंदगी गँवा बैठे। अपने प्रियजन की मृत्यु पर, धन या प्रतिष्ठा नष्ट होने पर अनेक व्यक्ति आत्महत्या करते, पागल होते, बीमार पड़ते देखे गए हैं। शोक का इतना गहरा घाव उन्हें लगता है, जो इन वस्तुओं के प्रति अतिशय आसक्त होते हैं। जिन्हें उतना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

ज्यादा मोह नहीं होता, उन्हें गहरी व्यथा भी नहीं होती, वे बड़े-बड़े झटकों को आसानी से सह लेते हैं। राजा हरिशचंद्र का ऐसा ही उदाहरण है, राज्य के चले जाने, स्त्री के बिक जाने, पुत्र के मर जाने पर भी वह मरघट में अपने कर्तव्य पर ठीक तरह डटे रहे। हजारों वर्ष बीत जाने पर भी उनका आदर्श ज्यों का त्यों जीवित है।

अनासक्त कर्मयोग की उपासना करने वाला व्यक्ति सांसारिक पंचभौतिक वस्तुओं की नश्वरता को गंभीर दृष्टि से देखता है और अनुभव करता है कि यह सारे दृश्य पदार्थ गतिवान हैं, यह उत्पन्न होते हैं, बढ़ते हैं, एक स्थान से दूसरे स्थान को चलते हैं और नष्ट हो जाते हैं। किसी को आज, किसी को कल नष्ट होना है, इस नाशवान गतिशीलता को भली प्रकार ध्यान में रखते हुए वह किसी को न तो अपनी समझता है और न किसी पर मालिकी गांठता है। जो वस्तुएँ उपयोग के लिए मिली हुई हैं, उनको ठीक तरह काम में लाता है, अपनी जिम्मेदारी उनके प्रति निबाहता है, फिर भी मोह-ममता में नहीं फँसता। यदि कोई प्यारी से प्यारी वस्तु नष्ट हो जाए तो वह अपने को शोकार्त नहीं होने देता वरन अपने को सँभाल लेता है, मन को समझा लेता है। जो क्रम संसार की समस्त वस्तुओं के ऊपर लागू हो रहा है, वही यदि अपने निकट वाली वस्तु के ऊपर भी लागू हो जाए तो इसमें आश्चर्य क्षोभ या व्यथा की कौन-सी बात है? अतीतकाल से नित्य असंख्य मनुष्य मरते आ रहे हैं, फिर यदि अपना कोई प्रियजन आज मर जाता है तो इसमें छटपटाने की क्या बात है? इसी प्रकार धन, यश, स्वास्थ्य जैसी अस्थिर वस्तुएँ डांवाडोल हो जाती हैं तो 'हाय, हाय' करने का क्या कारण है?

कर्मयोगी इन सब तथ्यों को समझता है, इसलिए हानि-लाभ की उलट-पलट को देखकर वह विचलित नहीं होता, वह दोनों की परवाह नहीं करता। परवाह करने योग्य एक ही बात उसे प्रतीत होती है, वह है—अपना कर्तव्य कर्म। अपनी ड्यूटी ठीक तरह अदा करता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है, यही एक बात उसके संतोष के लिए पर्याप्त है। अपने आनंद को वह दूसरों के हाथ बेच नहीं देता वरन अपनी मुट्ठी में रखता है। अमुक फल मिलना अपने हाथ की बात नहीं वरन दूसरों के हाथ की बात है, फिर ऐसा आधार क्यों पकड़ा जाए कि जब दूसरे की कृपा प्राप्त हो तब सुख मिले और जब दूसरा पक्ष चुप ही रहे या विपरीत उत्तर दे तो दु:ख में बिलखें। यह तो पराधीनता का बंधन हुआ। भाग्य के, प्रारब्ध के, ईश्वर के, धनी के, समर्थ के, किसी के भी आश्रित आप क्यों बनें? अच्छा यह है कि आप स्वाधीन रहें, अपनी स्वतंत्रता किसी के हाथ न बेचें, फल न सही, कर्म करना तो अपने हाथ में है। आप कर्म में ही संतुष्ट रहिए, उसी में आनंद ढूँढ़ निकालिए। फल की प्रतीक्षा में मुद्दतों बैठना पड़ता है, पर कर्म तो आप आज भी कर रहे हैं, अभी भी कर रहे हैं, फिर क्यों अपने को आज से ही अभी से ही आनंदित रखना आरंभ न कर दिया जाए?

सबसे बड़ा आध्यात्मिक लाभ इसमें है कि अंत:चेतना सांसारिक विषयों में लिप्त नहीं होती और जीव भव-बंधन में नहीं पड़ता। फलाशा में मोह-आकर्षण होता है, इसलिए उसका ध्यान बहुत काल तक उत्सुकतापूर्वक बना रहता है। यह उत्सुकता एक प्रकार के गहरे संस्कार के रूप में जम जाती है और जीव को मृत्यु के उपरांत भी अपनी ओर खींच लाती है। जड़ भरत की कथा ऐसा ही उदाहरण है। उन्हें एक मृग में मोह हो जाने के कारण स्वयं मृग बनना पड़ा था। गढ़े हुए धन के मोह में जिनका प्राणांत होता है, वे दूसरे जन्म में सर्प बनकर उस धन की चौकीदारी करते हैं। इसी प्रकार जो जिस प्रसंग में अत्यधिक मोहित एवं तल्लीन है, उसे अगले जन्मों में उसी क्षेत्र में जन्मने के लिए विवश होना पड़ता है। उस आसक्ति का आकर्षण निकृष्ट मार्ग पर घसीट ले जा सकता है। मुक्ति में, ईश्वर की प्राप्ति में, आत्मोन्नति में यह

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भारी बाधक हो सकता है, इसलिए कर्मयोग की साधना में अलिप्त रहने की व्यवस्था की गई है। कमल की बेल पानी में रहती है, पर उसके पत्ते जल की सतह से सदा ऊँचे रहते हैं, उसमें डूबते नहीं। कर्मयोगी का यही आदर्श होना चाहिए। संसार में रहकर अपने सामने आए कर्मों को पूर्ण मनोयोग के साथ करना चाहिए, पर उनमें मोहित नहीं होना चाहिए। यह तभी संभव है जब फल की आशा में तल्लीन न होकर कर्तव्य में ही संतुष्ट रहा जाए।

कर्म में दिलचस्पी रखना एक सात्विक और स्वाभाविक वृत्ति है, इसमें मोह का अंश नहीं है। हल जोतने, घास खोदने, लिखने, तोलने आदि क्रियाएँ दिलचस्पी से करने पर वे मनोरंजन, मन बहलाव या आत्मतुष्टि का कारण होंगी। यदि खेती की आमदनी की लंबी-चौड़ी प्रतीक्षा नहीं है तो हल जोतना खेल की तरह एक रुचिकर मनोरंजन होगा, इसमें बंधन में पड़ने का अवसर न आएगा। जो व्यक्ति फल को छोड़कर कर्म में ही निर्लोभ आनंद लेते हैं, वे माया के बंधन में नहीं पड़ते, उनके चित्त पर बंधनकारी संस्कारों का जमाव नहीं होता, फलस्वरूप आवागमन की फाँसी से सहज ही उन्हें छुटकारा मिल जाता है।

जिसको नित्य हल चलाने का काम करना है, उसे उसको ठीक तरह सीख लेना चाहिए, वरना संभव है कि हल की फाल टेड़ी होकर बैल का पैर फाड़ दे अपने को कुछ नुकसान हो जाए। जिसको नित्य कर्म करना है, उसे कर्म की कुशलता प्राप्त कर लेनी चाहिए, अन्यथा संभव है कि सुख करते दु:ख खड़ा हो जाए। कर्मयोग इसी कुशलता का नाम है, जो इस प्रकार कलापूर्ण ढंग से काम करना जानता है कि किए हुए काम का फल उलटा न निकले वही कर्मयोगी है। हम सबको कर्मयोग का अभ्यास करना ही चाहिए। यह हमारे लिए इतना ही जरूरी है जितना देन-लेन करने वाले को हिसाब-किताब जानना। □

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भक्तियोग

मनुष्य जैसे-जैसे आत्मोन्नति करता जाता है, वैसे ही उसकी आत्मीयता-ममता का विस्तार होता जाता है। नीच योनि के जीव अपने निजी शारीरिक स्वार्थ तक सीमित रहते हैं। पशु यदि भूखा हो तो अपने बच्चे के आगे का भोजन भी खा जाएगा, उसे इसका जरा भी ख्याल न होगा कि बच्चे को भूखा रहना पड़ेगा। इस पशुवृत्ति में बहुत से मनुष्य भी ग्रसित होते हैं। कितने ही ऐसे घोर स्वार्थी मनुष्य देखे जाते हैं, जो अपने शरीर को ही अपना समझते हैं और उसकी जितनी परवाह करते हैं, उतनी अपने बाल-बच्चों की भी नहीं करते। यह उन लोगों की स्थिति है जो मनुष्य शरीर में तो आ गए हैं, पर पशु वृत्तियों को त्याग नहीं सके हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसे लोगों को अविकसित कहा जाता है। जिसका स्वार्थ का दायरा जितना संकीर्ण है, वह उतना ही नीच कोटि का जीव है।

जब पशुता घटने लगती है और उच्च दैवी गुणों का विकास होने लगता है तो उसका परिचय आत्मीयता के विस्तार में मिलता है। अपने निजी शारीरिक स्वार्थों से आगे बढ़कर यह बाल-बच्चों में, कुटुंब-परिवार में, मित्रों में, संबंधी-रिश्तेदारों में दिलचस्पी बढ़ाता है और उन्हें भी अपनेपन की सीमा के अंदर ले आता है। अपने शरीर के स्वार्थों के समान ही इन लोगों की भी फिक्र और देखभाल करता है, उनके स्वार्थों को भी अपना ही स्वार्थ समझता है। क्रमशः यहाँ आत्मीयता का विस्तार बढ़ता है, पहले अपना ही स्वार्थ प्रधान था फिर वह कुटुंब परिवार तक बढ़ा, पीछे वही देश, जाति, विश्व तक अपना दायरा बढ़ाता है और अंत में नमक की डली जैसे पानी में घुल जाती है वैसे ही स्वार्थ, परमार्थ में घुल जाता है। हर एक में एक ही आत्मा, एक ही परमात्मा दिखाई देता है, इसी ऊँची अवस्था

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

को मुक्ति कहते हैं। जब स्वार्थ और परमार्थ का भेद मिट जाता है तो मेरा-तेरा नहीं रहता। द्वेषभाव समाप्त हो जाता है, तब पूरी आत्मोन्नति समझी जाती है। उसी अवस्था के प्राप्त करा देने के लिए सारी आध्यात्मिक साधनाओं की रचना हुई है।

यह एक अमिट मानव स्वभाव है कि जो वस्तु उसे अपनी प्रतीत होती है, उससे प्रेम करता है। अपनेपन का परिचय प्रेम में ही है। देने-लेने से आत्मीयता नहीं झलकती। साहूकार से कर्ज ले सकते हैं, रिश्वत, उधार या दान के रूप में किसी को दे भी सकते हैं, यह देन-लेन साधारण व्यापार है, इसे करने के साथ-साथ प्रेम भी हो, यह आवश्यक नहीं। ग्राहक और दुकानदार दोनों अपने-अपने हिसाब से आपस में लेन-देन करते हैं। दुनिया में तरह-तरह के रुपए-पैसे के, रूप-सौंदर्य के, सेवा-सत्कार के, विद्या-बुद्धि के, मेहनत-मजदूरी के व्यापार हो रहे हैं, इनके लिए यह आवश्यक नहीं कि खरीददार और बेचने वाले आपस में एक-दूसरे को अपना निजी आत्मीय समझें, मनुष्य जिसे अपना समझता है भले ही उससे देन-लेन न करे, पर प्रेम अवश्य करता है। जिस वस्तु के प्रति जितनी गहरी आत्मीयता होती है, उतना ही गहरा उससे प्रेम भी होता है। माता बच्चे को अपना समझती है, इसलिए यदि वह लाभदायक न हो तो भी उसे भरपूर स्नेह करती है, पतिव्रता पत्नी को अपना काला-कलूटा और दुर्गुणी पति भी इंद्र से सुंदर और बृहस्पति से गुणवान लगता है, यह इस बात के प्रमाण हैं कि तुच्छ और निकम्मी वस्तु भी यदि अपनी हो तो उसके प्रति सहज ही प्रेम उमड़ आता है।

पाठक जानते हैं कि आत्मोन्नति के साथ-साथ दूसरों के प्रति अधिक गहरी आत्मीयता बढ़ती है, अपना निजी स्वार्थ घटता है और परमार्थ में ही स्वार्थ दिखाई देने लगता है, दूसरों का हित अपने ही हित के समान जान पड़ता है, क्रमशः बढ़ते-बढ़ते स्वार्थ का बिलकुल अंत होकर उसका विशुद्ध स्वरूप परमार्थ ही शेष रह जाता है। इस

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आत्मविस्तार के साथ-साथ ही प्रेम का भी विस्तार होता है। जब दूसरे लोगों का स्वार्थ अपना स्वार्थ हो गया, एक ही आत्मा की ज्योति सबमें दिखाई पड़ने लगी और अपनापन चारों ओर फैल गया तो यह स्वाभाविक ही है कि दूसरों के प्रति उत्कट प्रेम उमड़ पड़े। तब सब बच्चे अपने पुत्र के समान, स्त्रियाँ माता या बहिनों के समान, तरुण पुरुष भाइयों के समान, वृद्ध लोग पिता के समान अपने जान पड़ें और उनसे सच्चे प्रेम भाव स्थापित हो जाएँ। व्यष्टि में से आगे बढ़कर जब समष्टि में चेतना का प्रवेश होता है तो प्रेम का दायरा भी बढ़कर अनंत हो जाता है। बूँद जब समुद्र के साथ संबंधित हो गई तो उसका अहंभाव भी उतना ही लंबा-चौड़ा हो गया।

यह एक निश्चित तथ्य है कि आत्मोन्नति और प्रेम विस्तार एक साथ रहते हैं। इनमें से कोई एक भी आगे-पीछे नहीं रह सकता है। जिसका प्रेम का दायरा विस्तृत है, उसकी निस्संदेह आत्मोन्नति हुई है, भले ही वह पूजा-पत्री न जानता हो। जो स्वार्थी, अनुदार, कठोर, रूखा और कंजूस है, वह नीचे दरजे में पड़ा हुआ है, भले ही वह तिलक-छाप, कंठी-माला, चोटी-जनेऊ धारण किए हुए हो, चाहे एक घंटे भजन करता हो, चाहे दिन-रात गौमुखी हाथ में डाले रहता हो। आत्मोन्नति एवं प्रेमोन्नति एक ही बात है, इसलिए प्रेमोन्नति और आत्मोन्नति को एक ही बात कहा जाएगा। ज्ञान और कर्म के द्वारा आत्मा को ऊँचा उठाने का उपयोग किया जाता है, साथ ही एक तरीका वह भी है कि प्रेमोन्नति की साधना द्वारा आत्मा को ऊपर उठाया जाए।

संस्कृत में 'भक्ति' शब्द का जो अभिप्राय है, हिंदी में पर्यायवाची शब्द 'प्रेम' है। भक्त और प्रेमी दोनों एक ही हैं, इनमें किसी प्रकार का कुछ अंतर नहीं है। आजकल 'भगतजी' शब्द से किसी धूर्त, बड़पेटा, हाऊ हप्प, ढोंगी, नाचकूद करने वाले, ढोल मजीरा पीटने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

वाले, हरामखोर मायाचारी व्यक्ति का अर्थ लिया जाता है। हमारा तात्पर्य इन पेशेवर लोगों से बिलकुल नहीं है। हम तो 'भक्त' के असली तात्पर्य का उल्लेख कर रहे हैं। जिसके अंत:करण में अनंत प्रेम की अजस्र धारा बह रही है, वही भक्त है। प्रेम से जो गद्‌गद् हो जाता है और अपने प्रेम पात्र के लिए आत्मोत्सर्ग करने को तैयार रहता है, वही भक्त है। जिसमें यह गुण न हो वह तो भक्ति की आड़ में जीविका या प्रतिष्ठा कमाने वाला मायाचारी व्यापारी मात्र है।

भक्त का प्रेमपात्र में आत्मभाव होता है। ईश्वर-भक्त अपना संपूर्ण प्रेम ईश्वर के ऊपर उंडेल देता है, उसी की भक्ति में तन्मय रहता है, यह भक्ति उसके अंत:स्रोत्रों को खोल देती है, उसके आनंद का पारावार नहीं रहता, ईश्वर का स्मरण, चिंतन, कीर्तन, अर्चन करने में गद्‌गद् हो जाता है, प्रभु को अपने में और अपने को प्रभु में एकीभूत हुआ देखता है और इस प्रेम के प्याले को पीकर मस्त हो जाता है। यह मस्ती अपने ढंग की निराली है, जिसे एक बार इसका चस्का पड़ा कि फिर दूसरी कोई वस्तु सुहाती ही नहीं। यह मधुरता इतनी अद्वितीय है कि प्याला होठों के आगे से हटाया ही नहीं जाता। जिस लोहे ने एक बार इस पारस को छुआ, वह पुराना चोला बदलकर दूसरे ही रंग-ढंग का हो जाएगा।

ईश्वरीय भक्ति को एक उमंग, सनक, उन्माद, मानसिक बीमारी, उत्तेजना या आवेश कहा जाता है। कहते हैं कि जिस प्रकार किसी क्रोधी या उन्मादी को कोई बेसिर-पैर की सनक उठ खड़ी होती है और वह उसी तरंग में अंट-शंट बकता है और बुद्धिरहित आचरण करता है, उसी प्रकार यह भक्त लोग भी ईश्वर को बिना जाने-बूझे किन्हीं के बहकावे में आकर ऊल-जलूल आचरण करते हैं। उपर्युक्त आरोपों को हम उचित नहीं समझते, क्योंकि ईश्वर भक्ति में अवैज्ञानिकता नहीं है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रेम की मर्यादा बढ़ाने से आत्मीयता की सीमा बढ़ती है और इसी के साथ-साथ आत्मोन्नति भी होती है। इस मर्यादा को अधिकतम विस्तृत करने की आवश्यकता है। ईश्वर से अधिक विस्तृत और यथावत् उत्तर देने वाली शक्ति और दूसरी कोई नहीं है। जड़ वस्तुओं से जो प्रेम किया जाता है, वह नश्वर और अस्थिर होता है, क्योंकि उस वस्तु के गुण, स्वभाव या अस्तित्व में अंतर आते ही प्रेम में भी घट-बढ़ हो जाती है और कभी-कभी तो असाधारण परिवर्तन के कारण वहाँ प्रेम के स्थान पर द्वेष तक उपस्थित हो जाता है। विछोह होने पर बड़े दु:ख और शोक का सामना करना पड़ता है, इसलिए प्रेम का पात्र ऐसा चुनना चाहिए जो सदा एकरस रहे और परिवर्तनशील न हो, ऐसा एकमात्र परमात्मा ही है।

बेशक ईश्वर को हमारे द्वारा खुशामद कराने की कोई आवश्यकता नहीं है, न वह प्रशंसा, स्तुति, गुणगान सुनकर प्रसन्न होता है और न निंदा सुनकर अप्रसन्न। उसके लिए भक्त और निंदक समान है। न तो भक्तों को कुछ पुरस्कार देता है और न अभक्तों को किसी दंड में डालता है। उसने किसी जीव का यह कर्तव्य नहीं ठहराया है कि नित्य ही पूजा-उपासना किया करे। यह सब तो अपने लाभ की, अपने हित की बातें हैं, जिन्हें ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए नहीं वरन अपनी आत्मिक चेतना को ऊँची उठाने की दृष्टि से करना चाहिए। रबड़ की गेंद को जब हम जोर से खींचकर दीवार में मारते हैं तो वह उतनी ही जोर से टक्कर खाकर वापस लौट आती है। ईश्वर के लिए जितना प्रेम फेंका जाता है, वह अखिल विश्वव्यापी प्रेम तत्त्व से टक्कर खाकर वापस लौटकर ब्याज समेत अपने ही पास आ जाता है। भक्त को अक्सर ऐसे अनुभव होते हैं, मानो ईश्वर उसकी प्रार्थना सुन रहा है, प्रेम का उत्तर दे रहा है और वैसा ही व्यवहार कर रहा है जैसा कि सच्चा मित्र अपने मित्र के उपकार का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बदला किसी-न-किसी रूप में चुकाता है। यह प्रत्युपकार कहाँ से मिलते हैं ? कौन देता है ? उसका उत्तर पूर्व पंक्तियों में दिया जा चुका है। अपने अंत:करण से निकला हुआ प्रेम जब वापस लौटता है तो ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई दूसरा हमसे प्रेम कर रहा है।

दर्पण के काँच पर अपनी छाया पड़ती है, वह छाया चमकदार पारे की पॉलिश से टक्कर खाकर वापस लौटती है तो दर्पण में अपना ही प्रतिबिंब इस प्रकार दिखाई पड़ता है, मानो हूबहू अपने ही जैसा कोई दूसरा आदमी सामने खड़ा हुआ है। किसी पक्के बंद मकान में या पक्के कुएँ में यदि कुछ शब्द किया जाए तो वह दीवारों से टक्कर खाकर वापस लौटता है और ऐसा प्रतीत होता है मानो वैसे ही शब्द कोई दूसरा व्यक्ति उच्चारण कर रहा है। हम दर्पण के प्रतिबिंव और पक्के मकान की प्रतिध्वनि को अपने से पृथक देखते हैं तो भी वह असल में अपनी शक्ति का ही छायाचित्र है। ईश्वर की ओर से प्रेम के बदले में प्रेम या अन्य प्रत्युपकार प्राप्त होते हैं, वे एक वैज्ञानिक नियम के अनुसार अपने ही प्रयत्न के फल हैं। भौतिक वस्तुओं के प्रति फेंका गया प्रेम उन्हीं में घुल जाता है। यदि वे वस्तुएँ बदला दे सकें तो ठीक अन्यथा वह प्रयत्न व्यर्थ चला जाता है, किंतु ईश्वरीय प्रेम में ऐसा विकल्प नहीं है, उसका परिणाम निश्चित है, बदला मिलने की उसमें तो गारंटी है। अपने धन को लोग ऐसी जगह में लगाना चाहते हैं, जहाँ से वह सुरक्षित रूप से लौट आए, फिर प्रेम जैसे हृदय रस को पंचभूतों से बने हुए साख रहित कर्जदारों के पास धरोहर रखने की अपेक्षा यदि ईश्वर रूपी प्रतिष्ठित बैंक में जमा किया जाए तो यह उचित ही है, इसमें बुद्धिमानी ही है।

आचार्यों ने भक्ति को दो भागों में विभाजित किया। एक गौणीभक्ति, दूसरी पराभक्ति। आरंभिक अभ्यासी को गौणीभक्ति का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

आसरा लेना पड़ता है, पर जब थोड़ा-बहुत आत्मविकास हो जाता है तो फिर उसकी आवश्यकता नहीं रहती, तब पराभक्ति का अवलंबन ग्रहण करना होता है। ईश्वर के महान, व्यापक, विभु, सर्वशक्तिमान स्वरूप को आरंभिक अभ्यासी अपनी निर्बल चेतना द्वारा चिंतन करने में समर्थ नहीं होते, इसलिए उन्हें ईश्वर की एक प्रतिमा का सहारा लेना पड़ता है, यह प्रतिमा मनुष्याकार ही हो सकती है। सर्प यदि ईश्वर का कोई स्वरूप निर्धारित करता तो उसका ईश्वर एक बलवान मोटा-ताजा सर्प होता। इसी प्रकार यदि अन्य जीव-जंतु, पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े ईश्वर के रूप की कल्पना कर सकें तो वे अपनी-अपनी जाति में ही उनकी प्रतिमा निर्धारित करेंगे। मनुष्यों में भी ऐसा ही है। विभिन्न देशवासियों ने ईश्वर के जो रूप कल्पित किए हैं, जिन वस्त्र-आभूषणों से उसे सजाया है, उसका स्वभाव जैसा माना है, वह उनकी अपनी स्थिति के अनुकूल ही है। अँग्रेजों का 'गॉड' पूरी साहबी पोशाक में गोरा-चिट्टा होगा। मुसलमानों के अल्लाह मियाँ चूड़ीदार पायजामा पहने, टर्की टोपी लगाए, दाढ़ी वाले होंगे। हिंदुओं के ईश्वर भारतीय वेशभूषा और विचारधारा को पसंद करते रहते हैं। यह विभिन्न रूप ईश्वर की एकांगी कल्पनाएँ हैं, तो भी इनका उपयोग है ही।

मूर्ति, आरती, नमाज, भजन, पूजा, जप, कीर्तन आदि साधनों द्वारा अपना प्रेम ईश्वर के निमित्त प्रेरित किया जाता है, यह गौणीभक्ति है और आरंभिक साधकों के लिए बहुत हद तक इसकी आवश्यकता भी है, परंतु जब आत्मोन्नति में प्रगति हो चुके तो सदा इन्हीं से उलझे रहने की जरूरत नहीं है। एक कक्षा पार कर लेने पर दूसरा पाठ ग्रहण करना ही उचित है। पहली सीढ़ी पर चढ़ जाने के पश्चात दूसरी के ऊपर चढ़ने की तैयारी करनी ही चाहिए। गौणीभक्ति के पश्चात पराभक्ति का दर्जा आता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जो लोग आध्यात्मिक बचपन को पार कर चुके हैं, जिन्हें खिलौनों से खेलने की दिलचस्पी उतनी न रहे, जिनकी जिज्ञासा और विवेक-बुद्धि जागृत होने लगे, उन्हें पराभक्ति की ओर कदम उठाना चाहिए। गौणीभक्ति में प्रेमी बनने का जो छुट-पुट अभ्यास किया था, उसे ठीक प्रकार उपयोग करने के लिए तैयार होना चाहिए। ईश्वर के बनाए हुए इस विश्व के जड़-चैतन्य पदार्थ सभी हैं, पर चैतन्य में ईश्वरीय अंश अधिक हैं। साधारण मनुष्यों की कोई परवाह नहीं करता, पर अवतारी महापुरुष जिनमें ईश्वर की अधिक कलाएँ होती हैं, संसार में बड़े सम्मान के साथ पूजे जाते हैं। यह पूजा ठीक भी है, क्योंकि अधिक प्राप्त करने के लिए अधिक बलवान का सहारा लेना पड़ता है। गर्मी की आवश्यकता तारागणों से पूरी नहीं होती, इसके लिए सूर्य की सहायता लेनी पड़ती है। इसी प्रकार ईश्वरीय शक्ति की अधिक कलाएँ जड़ पदार्थों की अपेक्षा चैतन्यों में देखते हुए हमारी श्रद्धा और पूजा के वे ही अधिकारी हो सकते हैं। गौणीभक्ति में मनुष्य जड़ पदार्थों की मूर्ति, वृक्ष, नदी, पर्वत, पुस्तक आदि के ऊपर निर्भर रहता है। इन्हीं की पूजा-अर्चना विविध कर्मकांडों द्वारा किया करता है, पर पराभक्ति में चैतन्य प्राणियों के अंदर जगमगाती हुई अखंड ज्योति में अपने प्रेम को नियोजित करता है।

धातु या पाषाण की प्रतिमाओं की कक्षा पार कर लेने के बाद उससे अधिक बड़ी और अधिक चैतन्य प्रतिमा का आश्रय लेकर अपना प्रेम ईश्वर तक पहुँचाना होता है। यह विश्व ब्रह्मांड एक प्रकार की प्रतिमा ही है। भगवान ने अपने विराट स्वरूप का दर्शन अर्जुन को कराया है, उसका उल्लेख गीता के ११ वें अध्याय में मिलता है। यह समस्त विश्व भगवान का ही विराट् रूप है, पराभक्ति की कक्षा वाले इसी प्रतिमा को अपना अवलंबन बनाते हैं। राजपूतों में एक समय ऐसा रिवाज था कि यदि विवाह के समय किसी कारणवश वर उपस्थित न

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हो सके तो उसकी पगड़ी और कटार के साथ कन्या का विवाह हो जाता था। गौणीभक्ति पगड़ी-कटार का विवाह है। यदि ईश्वर को समझने योग्य विवेक न हो, उसे ठीक तरह अनुभव न किया जा सके तो निर्जीव प्रतिमाओं की सहायता से भी काम चला लिया जा सकता है। जिनकी आँखें दुखने आ जाती हैं या कमजोर होती हैं, उन्हें सूर्य की तेज धूप देखना सहन नहीं होता। ऐसी दशा में उनकी आँखों पर रंगीन काँच का चश्मा पहना देते हैं, ताकि नेत्रों की सामर्थ्य के अनुसार ही प्रकाश मिले, परंतु जब आँखें अच्छी हो जाती हैं तो उस चश्मे की जरूरत नहीं रहती। प्राणियों की चैतन्यता साक्षात परमात्मा की ही दिव्य ज्योति है, पर कई व्यक्तियों की चेतना उसे असली रूप में देख नहीं सकती, वह मोह में फँसकर किसी को मित्र, किसी को शत्रु, किसी को अपना, किसी को विराना, किसी को नीच, किसी को ऊँच देखती है, यह भेदभाव ही वह कमजोरी है जिसके कारण सामने खड़े हुए ईश्वर का प्रचंड तेज देखा नहीं जाता और कल्पित प्रतिमाओं से किसी प्रकार काम निकाला जाता है।

गीता के ११वें अध्याय के आठवें श्लोक में भगवान ने अर्जुन से कहा है कि—"तू अपने इन चर्म-चक्षुओं से मेरे वास्तविक रूप को न देख सकेगा, इसलिए मैं तेरी दिव्य-दृष्टि को खोलता हूँ, उससे तू मेरे योग और ऐश्वर्य को देख।" दिव्य-दृष्टि द्वारा, ज्ञान-दृष्टि द्वारा ही ईश्वर की झाँकी की जा सकती है, चर्म-चक्षुओं की उस तक पहुँच नहीं हो सकती। आँखों से पंचभौतिक वस्तुएँ दिखाई पड़ती हैं क्योंकि नेत्र स्वयं पंचभौतिक हैं। ईश्वर सूक्ष्म है, सत्-चित्-आनंदस्वरूप है, इसलिए उसका दर्शन आत्मा की, ज्ञान की दिव्य-दृष्टि से ही हो सकता है। गौणीभक्ति चर्म-चक्षुओं का विषय है। चुहिया के बच्चों की आँखें जन्म के समय बंद रहती हैं, उन दिनों वे अपनी माता को पंजों से टटोलकर ढूँढ़ते हैं, पर जब आँखें

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

खुल जाती हैं तो झट दौड़कर अपनी माता के पास पहुँच जाते हैं। ज्ञान की दिव्य-दृष्टि न खुलने तक गौणीभक्ति आवश्यक है, उसके बिना काम नहीं चल सकता। अनेक व्यक्ति लोक-व्यवहार में बहुत ही चतुर और क्रिया-कुशल होते हुए भी आत्मिक दृष्टि से बिलकुल बालक हो सकते हैं, उनके लिए गौणीभक्ति की ही आवश्यकता है, उन्हें प्रतिमाओं का दर्श, स्पर्श, पूजन, अर्चन करके अपने अलौकिक प्रेम का विस्तार करना चाहिए, पर जिनका आत्मिक बचपन समाप्त हो जाए, जिनके नेत्र उतने कमजोर न रहें, उन्हें पराभक्ति की ओर प्रगति करनी चाहिए, ईश्वर के अधिक तेजस्वी और अधिक स्पष्ट स्वरूप का दर्शन करना चाहिए।

कई लोग कहते हैं कि हाथ से गढ़े हुए या दिमाग से बने हुए ईश्वर में दिलचस्पी नहीं, यह तो हाथ के खिलौने हैं, वास्तविक ईश्वर नहीं। वे कहा करते हैं कि धातु-पत्थर की मूर्तियाँ और तस्वीरें शिल्पकारों द्वारा बनाई हुई हैं, यह नष्ट होने वाली हैं, जड़ हैं और भावना रहित हैं, किंतु ईश्वर सत् है, सदा रहने वाला है, चित् है, चैतन्य है, आनंद है, आनंद से परिपूर्ण है, पर इन तीनों में से एक भी गुण जिनमें नहीं है, उस प्रतिमा को ईश्वर क्यों कर मानें? और क्यों कर उसे उच्च श्रद्धा के साथ प्रेम करें? ऐसे लोग अदृश्य लोक के निवासी ईश्वर के बारे में भी ऐसे संदेह उठाते हैं कि ध्यान किये जाने वाले चित्र हमारी कल्पना की उपज हैं। अमुक लोक में अमुक आकार-प्रकार का ईश्वर रहता है, इन अप्रत्यक्ष बातों का कोई प्रमाण नहीं, संभव है यह सब कपोल-कल्पनाएँ ही हों। प्रमाण रहित बात की प्रतीति नहीं होती और प्रतीति के बिना प्रीति कैसे हो सकती है? वे कहते हैं कि हम अंधविश्वासपूर्वक यों ही अंधाधुंध भक्ति करने में असमर्थ हैं, जो बात विवेकसम्मत हो, उसे ही स्वीकार कर सकते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उपर्युक्त प्रकार के प्रश्न हमारे सामने प्रकारांतर से प्राय: नित्य ही आते रहते हैं, इन्हीं आशयों की दर्जनों शंकाएँ नित्य यहाँ कार्यालय में आया करती हैं। यह बौद्धिक युग है, इसमें हर बात तर्क की कसौटी पर कसी जाती है और प्रत्यक्षवाद में विश्वास किया जाता है, फिर ईश्वर और ईश्वर भक्ति के संबंध में भी तार्किक आधारों की अपेक्षा की जाती है तो इसमें कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। ऐसे महानुभावों को पराभक्ति के विज्ञान का मनन करना चाहिए। जितना अधिक इस संबंध में विचार किया जाएगा उतना ही अधिक संतोष होता जाएगा। जो चैतन्य प्राणी हमें दिखाई दे रहे हैं, इन सबमें ईश्वर का अंश मौजूद है। अपने पिता के समान पुत्र में भी गुण हैं। परमात्मा के समान आत्मा भी सच्चिदानंद स्वरूप है, वह न तो शिल्पकार का बनाया हुआ है, न कपोल-कल्पना है और न जड़ ही है। ईश्वर की जीती-जागती, चलती-फिरती प्रतिमाएँ हमारे सामने प्रत्यक्ष रूप से घूम रही हैं, इनके अस्तित्व को तर्क और प्रमाणों के साथ जिसका जी आए परख सकता है और अपनी दिलजमई कर सकता है।

इन प्राणियों के प्रति भक्त अपनी भक्ति का विस्तार करके नर-नारायण की पूजा कर सकता है। यह पराभक्ति प्रत्यक्ष है, स्पष्ट है, आत्मा को संतोष देने वाली है और प्रत्युत्तर देती है। आस्तिक और नास्तिक दोनों ही इस लक्ष्य पर अपने-अपने दृष्टिकोण से एकत्रित हो सकते हैं। आस्तिक भूत मात्र में ईश्वर को देखता हुआ उसकी पूजा की भावना से लोकसेवा को अपना लक्ष्य बनाता है, नास्तिक समाज की सुव्यवस्था और उन्नति के लिए लोक सेवा को प्रधान कर्तव्य नियत करता है। दोनों ही इस तथ्य से सहमत हैं कि मनुष्य की उच्च आध्यात्मिक भावनाओं का उपयोग लोकसेवा में होना चाहिए। प्राणियों को ऊँचा उठाने और सुखी बनाने की प्रक्रिया के लिए अंत:करण की सद्भावनाओं को नियोजित किया जाना चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रेम को जिसके ऊपर आरोपित किया जाता है, उसके प्रति आत्मीयता उमड़ आती है। जो अपना प्रतीत होता है, उसके लिए कुछ त्याग करने की, देने की, सेवा की उमंगें उठा करती हैं। जुबानी जमा-खर्च से या मन-ही-मन भक्ति के हवाई किले बनाने से उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती। वे भक्त अधूरे हैं जो मन की कल्पनाओं के मोदक खिला-खिलाकर ईश्वर का पेट भरना चाहते हैं, या रोली-चंदन, अक्षत, पुष्प, धूप में पैसा दो पैसा खर्च करके मनोवांछा पूरी करना चाहते हैं। प्रेम का मार्ग कठिन है, इस पर शूरवीर चल सकते हैं, प्रेमी बनने के लिए हाथ भर का कलेजा होना चाहिए। अपने लिए कुछ न चाहना और दूसरों के लिए सब कुछ दे डालना, यह कार्य जिसे सरल प्रतीत होता है, जो इधर दिलचस्पी रखते हैं, वे ही भक्ति का कुछ मर्म समझ सकते हैं। अन्य लोग जिनका जीवन स्वार्थ बंधनों में जकड़ा हुआ है, जिन्हें आपापूती से फुरसत नहीं, वे 'भक्ति' बेचारी को बेकार अपने साथ कांटों में घसीटते हैं।

विश्व प्रेम का क्रियात्मक रूप अपने पास के और समान स्थिति के लोगों की सेवा करना है। अपने से बहुत दूर रहने वाले और अपने स्वभाव, विचार तथा पहुँच से दूर वालों की सेवा उतनी सरल नहीं है, जितनी कि निकटवर्ती और समान वृत्ति के लोगों की सरल है। इसलिए देश-जाति की सेवा विश्व सेवा ही हो जाएगी। यह विश्व सेवा परमेश्वर की सर्वोत्तम भक्ति है, इससे बढ़कर अन्य कोई प्रकार हो नहीं सकता। अपनी शारीरिक, मानसिक और भौतिक शक्तियों को पूजा की सामग्री बनाकर उसे अपने प्राणप्रिय देवता के चरणों पर चढ़ाना चाहिए और त्याग तथा बलिदान का ऊँचा आदर्श उपस्थित करके अपने सच्चे प्रेम का परिचय देना चाहिए। यह भक्ति कठिन है, क्योंकि इसमें कड़ी कसौटी रखी गई है। जो अपनी शक्ति का जितना भाग परमार्थ में लगाए, वह इतना ही बड़ा भक्त कहा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जाएगा। यहाँ परिमाण की प्रमुखता नहीं वरन अंश की अधिकता का महत्त्व है। जैसे एक करोड़ रुपयों वाला व्यक्ति यदि एक लाख रुपया लोक सेवा में लगाता है तो उसने अपनी शक्ति का सौवां भाग खर्च किया, किंतु जिसके पास सौ रुपए हैं, उसने पचास लगा दिए तो उसका आधा भाग खर्च हुआ। लौकिक दृष्टि से पचास रुपए की अपेक्षा एक लाख देने वाला बड़ा दानी है, पर आध्यात्मिक दृष्टि से जब निष्ठा और श्रद्धा की तोल की जाती है, वहाँ सौवां भाग देने की अपेक्षा आधा भाग देने वाला ऊँचे दर्जे का है, उसकी श्रद्धा अधिक प्रशस्त है। अपनी शक्ति का न्यूनतम भाग स्वार्थ में खर्च करना और अधिकतम भाग परमार्थ में व्यय करना, यह सच्ची भक्ति की परीक्षा है। इसे नापकर यह जान लिया जा सकता है कि किस भक्त में सच्ची भक्ति का कितना अंश है।

ईश्वर भक्त अपनी भक्ति-भावना को विश्वव्यापी प्रभु के चरणों में अर्पण करता है, अपने प्रेम पुष्पों को अंजलि में भरकर पूजा की वेदी पर बिखेर देता है। वह हर घड़ी यही सोचता है कि मैं अपने प्रेम पात्र की चलती-फिरती प्रतिमाओं की क्या-क्या और किस प्रकार सेवा करूँ? जो छोटी-बड़ी शारीरिक, मानसिक और भौतिक शक्तियाँ उसके पास होती हैं, उन्हीं को अंजलि में लेकर वह नर-नारायण के सामने उपस्थित होता है। मंदिर की अव्यवस्था को सुधारता है, गंदगी को साफ करता है, पूजा के पात्रों को माँजकर स्वच्छ बनाता है, गर्द गुबार को हटाता है, दूसरे शब्दों में यों कहिए कि अपने चारों ओर फैले हुए पाप, दुर्गुण, दुराचार, कुविचार, अन्याय, शोषण, गुंडापन, अज्ञान आदि आसुरी तत्त्वों से निरंतर संघर्ष करता है। इन्हें दूर करने में, मार भगाने में जी-जान से जुटता है। यद्यपि बदले में उसे नित्य ही अपशब्द, बुराई, बदनामी, पीड़ा, हानि, अपमान आदि सहन करने पड़ते हैं तो भी वह अविचल भाव से

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

धैर्यपूर्वक हँसते-हँसते इन सबको सहन करता है और अपने कर्तव्य पथ पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ता चलता है। मंदिर में दूसरा काम उसे भगवान को प्रसन्न करने वाली सामग्री जुटाना होता है। आरती, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, चंदन, रोली, अक्षत, फल, मधुपर्क आदि पूजा के उपादान सामने उपस्थित करने पड़ते हैं। दूसरे शब्दों में सेवा, उपकार, दया, सहानुभूति, उदारता, त्याग, नम्रता, ईमानदारी, पवित्रता आदि सद्वृत्तियों द्वारा नर-नारायण को संतुष्ट और प्रसन्न करता है। पापों से लड़ना और पुण्य को बढ़ाना, यह दोनों कार्य उसे समान रूप से प्रिय होते हैं । पूजा के यह दोनों अंग हैं। रथ दो पहियों से चलता है, एक पहिया न हो वह आगे न चल सकेगा। ईश्वर के मंदिर में गंदगी हटाकर स्वच्छता लाने की भी जरूरत है और पूजन सामग्री की भी। भक्त इन दोनों ही कार्यों को समान रूप से कंधे पर उठाता है।

भक्ति में तन्मयता होती है, आवेश होता है, लगन होती है, प्रेम में उन्माद होता है, रस होता है, विह्वलता होती है और अपने प्रेमी में घुल जाने की उत्कंठा होती है, अपना आपा भूल जाता है और प्रेमी ही स्मरण रहता है। यह चिह्न गौणीभक्ति में भी पाए जाते हैं । कई भक्त कीर्तन करते हुए, हरि चर्चा करते हुए, कथा कहते या सुनते हुए, जप-स्मरण करते हुए, पूजा-स्तुति करते हुए प्रेम में गद्‌गद् हो जाते हैं, उनकी आँखों से अश्रुपात होने लगता है और तन्मयता में देह की सुधि-बुधि भूल जाते हैं। पराभक्ति में प्रेम के साथ विवेक, दूरदर्शिता, गंभीरता और मननशीलता भी रहती है, इसलिए उसमें उपर्युक्त लक्षणों का रूप कुछ बदल जाता है। पराभक्ति का उपासक परमार्थ में तन्मय हो जाता है, दूसरों को दुखी देखकर आँसू भर लाता है, अपने स्वार्थ की सुधि-बुधि भूल जाता है, अन्य प्राणियों की हित साधना करते हुए वह गद्‌गद् हो जाता है और पुण्य का उत्कर्ष होता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

देखकर पुलकित हो जाता है। धर्म के लिए कष्ट सहते हुए उसे तीर्थ यात्रा जैसा, तपस्या जैसा आनंद आता है। गौणीभक्ति में भक्त को जो आवेश आता है, वह ज्वर की तरह उतर जाता है या ढाक के फूल की तरह निष्फल झड़ जाता है, किंतु पराभक्ति का आवेश नपुंसक नहीं होता, उससे कार्य की उत्पत्ति होती है। उत्तम, लोक-कल्याणकारी, संसार का सुख बढ़ाने वाले पुण्यमय कर्मों की सृष्टि होती है, धर्म को प्रोत्साहन मिलता है। जीवित जगत को प्रेम दान देने वाला उसकी सुख-शांति के लिए कर्म भी करता है और वे कर्म इतने उच्चकोटि के होते हैं कि चिरकाल तक उनके आदर्श का प्रकाश जनता का पथ-प्रदर्शन करता रहता है।

प्रेम मानव प्रकृति का एक अमूल्य तत्त्व है। यदि इसे जीवन का सार कहें तो अनुचित न होगा। पशुता से जितना ऊँचा उठकर दैवी तत्त्व के निकट मनुष्य बढ़ता जाता है, उतना ही वह प्रेम का उपासक बनता जाता है। प्रेम और परमात्मा एक ही वस्तु के दो नाम हैं। जिनके अंत:करणों में प्रेम का अमृत कलश झलकता है, समझिए कि वहाँ स्वयं साक्षात प्रभु विराजमान हैं। भक्ति, ईश्वर को प्राप्त करने का द्वार है, इसमें प्रवेश करने के लिए पाठकों को श्रद्धापूर्वक कदम बढ़ाना चाहिए। ईश्वर की प्रतिज्ञा है कि जो सच्चे हृदय से मेरी भक्ति करता है, उसके योगक्षेम की जिम्मेदारी मैं अपने ऊपर ले लेता हूँ और शीघ्र ही इस नश्वर संसार सागर से पार कर देता हूँ। भक्ति का ऐसा ही माहात्म्य है, पर वह भक्ति सच्ची भक्ति होनी चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

विहंगावलोकन

ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग की संक्षिप्त रूपरेखा पाठक पिछले पृष्ठों में पढ़ चुके हैं। अब उसका क्रियात्मक और व्यावहारिक रूप जानना है। प्राथमिक सीढ़ी ज्ञानयोग है, ईश्वर, जीव और प्रकृति, यह तीन ही जानने योग्य वस्तुएँ इस संसार में हैं। इनको जानने के लिए पूरा-पूरा प्रयत्न करना ही ज्ञानयोग है। सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान कर्ता, भर्ता, हर्ता प्रभु कौन है, कहाँ है, कैसा है, क्या उसका उद्देश्य है और किस प्रकार उसकी कार्यप्रणाली चलती है? इन प्रश्नों का पूरी गंभीरता और सावधानी के साथ विवेचन करना चाहिए। केवल जनश्रुति के आधार पर नहीं वरन तात्त्विक मीमांसा के आधार पर विवेकपूर्वक उसका समाधान करना चाहिए। जिस सरकार के राज्य में रहते हैं, उसका ढाँचा और कानून जानने की हर आदमी को जरूरत है। जो शक्ति हमें उत्पन्न करती है, अपने शासन में रखती है और अंत में नष्ट कर देती है, उसके संबंध में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है, जिससे प्रतिकूल आचरण के कारण उत्पन्न होने वाले दुःखों से बचकर अनुकूल आचरण का सुख भोग सकें।

हमारा अपना अस्तित्व क्या है? आत्मा का स्वरूप क्या है? उसकी प्रवृत्ति किधर हो रही है? मृत्यु के उपरांत क्या होता है? स्वर्ग-नरक की व्यवस्था किस प्रकार है? जीवन किसलिए धारण किया जाता है? मुक्ति क्या है? सुख का स्रोत कहाँ है? आदि प्रश्न आत्मा की जानकारी के संबंध में उठते रहते हैं, इनको समझना और विवेचना करना, यह आत्मज्ञान है। इसी प्रकार प्रकृति की व्यवस्था समझनी चाहिए। आरोग्यशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, भूगोल, खगोल, पदार्थ विज्ञान, मनोविज्ञान यह सब प्रकृति के-संसार के रहस्यों की जानकारी के विज्ञान हैं। इनका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए और वर्तमान काल की जो सांसारिक व्यवस्था है और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

उसमें जो प्रगति हो रही हो, उसकी जानकारी खासतौर से रखनी चाहिए। समाचार पत्रों का नित्य पढ़ना संसार की वर्तमान स्थिति से परिचित होने का इस युग में एक अच्छा-खासा साधन है। ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?, गहणा कर्मणो गति तथा जीवन की गूढ़ गुत्थियों पर तात्त्विक प्रकाश, पुस्तकों में हम ईश्वर, जीव और प्रकृति संबंधी तत्त्वज्ञान की बहुत कुछ चर्चा कर चुके हैं। अन्य सद्ग्रंथों से, अनुभवी सत्पुरुषों के सत्संग से, मनन-निदिध्यासन से इन तथ्यों के संबंध में और अधिक ज्ञान संग्रह करना चाहिए। सरसरी निगाह से पुस्तकें पढ़ जाने या कान से सुन लेने मात्र से काम न चलेगा, वरन जानकारियों को अंत:चेतना में बहुत गहरा उतारना होगा। जन विश्वास और आचरण को एक पंक्ति में खड़ा करना होगा, तब ही ज्ञानयोग की सफलता कही जाएगी। जो बात विवेक की कसौटी पर कसने के बाद खरी जँचे, उसे सच्चे हृदय से दृढ़तापूर्वक अपना लिया जाए, इसी सत्य साधना पर मनुष्य को प्रेरित करना, ज्ञानयोग का उद्देश्य है।

ज्ञान की आधारशिला पर कर्म की प्रवृत्ति होनी चाहिए। आप जो भी काम करें, उसके संबंध में पहले पर्याप्त सोच-विचार, खोज-बीन, तर्क-वितर्क, ढूँढ़-तलाश करनी चाहिए। पहले ज्ञान पीछे कर्म के क्रम का जहाँ ध्यान रखा जाता है, वहाँ भूल होने की संभावना बहुत कम रहती है। किसी कार्य का बचपन ज्ञान है और तरुणाई कर्म है। ज्ञान परिपक्व होकर कर्म की प्रेरणा करता है। यों तो लोग रोज ही कुछ-न-कुछ कर्म करते हैं, पर वह अंधाधुंध है, इसका फल उलटा और सीधा दोनों प्रकार का मिलता है। इस अनमेल ताने-बाने में जीव उलझ जाता है और बंधन में पड़कर भय बाधाएँ सहता रहता है। यदि उद्देश्यपूर्वक विचार और विवेकपूर्वक कर्तव्य भावना से कर्म किया जाए तो यही मामूली काम-काज, जिन्हें हर आदमी आमतौर से करता है, यज्ञ रूप हो सकते हैं और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

गृहस्थी में ही तपोभूमि की साधना की जा सकती है। स्वार्थ के लिए नहीं कर्तव्य के लिए कर्म करो, ड्यूटी समझकर पवित्र भावना से अपने काम-काज में जुटे रहो। छोटा काम है तो भी उसे पूरी दिलचस्पी, ईमानदारी, मेहनत और खूबसूरती के साथ करो। अपने कार्य में पूर्ण रूप से व्यस्त हो जाओ, जिससे चित्त में अनावश्यक विक्षेप उत्पन्न न होने पाए। काम को खेल समझकर मनोरंजन की तरह करते रहो, उसका भार मन पर मत पड़ने दो। यदि परिश्रम के अनुसार फल न मिले तो भी उदास या दुखी मत बनो। फल की आशाओं के महल मत बाँधो, वरन अपने कर्तव्यपालन के आनंद में हर घड़ी मस्त रहो। यही कर्मयोग का संदेश है। इस संदेश को ठीक तरह हृदयंगम कर लेने से जीवन अत्यंत ही उत्साह, हर्ष और आनंद से भर जाता है, प्रसन्नता में असाधारण वृद्धि हो जाती है, क्रोध, झुँझलाहट, चिंता, व्यथा, वेदना, शोक एवं निराशा की दुखदाई अग्नियों से अनायास ही छुटकारा मिल जाता है।

भक्तियोग अंतिम अवस्था है, ज्ञान और कर्म से परिपक्व मनोभूमि में से प्रेम की मखमली हरियाली उपज पड़ती है, वह इतनी स्वच्छ और विस्तृत होती है कि स्वार्थों के तुच्छ दायरे में बंधित न रहकर विश्वव्यापी चैतन्य तत्त्व के साथ, विश्वात्मा के साथ, परम आत्मा के साथ घुल-मिल जाती है। यह विकसित प्रेम ईश्वर का ही रूप है मनुष्य जाति ईश्वर के रूप में उन्हीं की उपासना करती है। अखिल विश्व में सूक्ष्म रूप से जो दिव्य तत्त्व व्याप्त हो रहे हैं, इन दिव्य तत्त्वों में प्रेम सर्वोपरि है, यह बात निस्संकोच रूप से कही जा सकती है कि जिसके अंत: में जितना निर्मल प्रेम है, उतना ही उसमें ईश्वर का निवास है। जल से भरा हुआ बादल आकाश से उतरकर भूमि के निकट आ जाता है और अपनी देह को बूँद-बूँद गलाकर प्यासी पृथ्वी के मुँह में टपका देता है, भक्त का-प्रेमी का यही लक्षण है, ऊँची संपदाएँ लेकर वह आकाश में नहीं रहना चाहता वरन नीचे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दर्जे का सादा जीवन पसंद करता है। छोटे पतित अज्ञानग्रस्त भूले-भटकों को छाती से लगाता है और उनके दु:ख दूर करने में अपनी शक्तियों को बूँद-बूँद करके निचोड़ देता है। इस पराभक्ति में भक्त को इतना अधिक आत्मसंतोष और परमानंद प्राप्त होता है, जिसकी तुलना और किसी सुख से नहीं हो सकती।

इस पराभक्ति का प्रारंभ गौणीभक्ति से होता है। उस भक्तवत्सल प्रेम-धाम परमेश्वर को अंत:करण में उकसाने और मानसिक चेतना में स्थान देने के लिए बराबर नाम स्मरण करना होता है। नाम के साथ उसके गुण का भी ध्यान हो आता है । हाथी शब्द कहने से उस विशालकाय जंतु के शरीर का ध्यान आ जाता है, इसी प्रकार कुत्ता, बिल्ली, महल, नदी, पर्वत आदि शब्दों के उच्चारण के साथ ही उनका रूप, गुण ध्यान में आ जाता है। शब्द यद्यपि मुख की कुछ पेशियों की हलचल से उत्पन्न होता है तो भी वह शब्द ध्यान चेतना में एकरूप का भी बोध कराता है। ईश्वर का नाम लेने से उस विश्वव्यापी चेतना का बोध होता है। बराबर नाम लेने से अंत:करण और मस्तिष्क में वह उकसाहट बराबर होती है, इस अभ्यास को जारी रखने से वह बार-बार उकसाया हुआ भाव पुष्ट और विस्तृत हो जाता है। पत्थर पर रस्सी की घिसावट से गड्ढा पड़ जाता है, इसी प्रकार बार-बार नाम जपने से ईश्वर की मन में स्थापना हो जाती है। भगवान की मूर्ति का दर्श, स्पर्श, भोग, आरती, धूप, दीप आदि से पूजा-अर्चा करना, कीर्तन करना, हरि चर्चा करना, तीर्थ यात्रा, स्नान-ध्यान, व्रत, वंदन करना, यह सब ऐसे ही आरंभिक प्रयत्न हैं, जिनके द्वारा भक्त यह प्रयत्न करता है कि ईश्वर का मेरे अंत:करण में निवास हो। यदि उसका प्रयत्न शुद्ध भावना से हुआ है, तो अवश्य ही एक दिन भक्ति-भावना जागृत हो जाती है, निर्बल एवं व्यापक प्रेम की कली खिल जाती है और पराभक्ति का आनंद आने लगता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

भक्तियोग आध्यात्मिक वृद्धावस्था की साधना है। ज्ञान और कर्म द्वारा पुष्ट हुए वृक्ष पर भक्ति का फल लगता है। वृद्ध पुरुष जो दृष्टिमंद हो जाने के कारण स्वाध्याय नहीं कर सकते, स्मृति नष्ट हो जाने के कारण ज्ञानार्जन नहीं कर सकते, शरीर शिथिल हो जाने के कारण कर्म करने की भी सामर्थ्य नहीं, जो मृत्यु के मुख में एक पाँव लटकाए बैठे हैं, उनको भक्ति में, नाम जप में, ईश्वर के ध्यान में ही सारा समय लगना चाहिए। जिनका शरीर सशक्त है, उन्हें ज्ञान-कर्म की सीढ़ियों पर चढ़कर पराभक्ति की उपासना करनी चाहिए। यही सनातन विधान है।

आलस्य का, अकर्मण्यता का, कर्मत्याग का मानव जीवन में कोई स्थान नहीं है। ईश्वरीय नियम के अनुसार सृष्टि की प्रत्येक वस्तु क्रियाशील है। गतिहीन कोई भी पदार्थ या प्राणी नहीं है। ग्रह-नक्षत्र, प्रकाश, शब्द आदि की गति निरंतर चालू रहती है। सृष्टि का प्रत्येक परमाणु अपनी धुरी पर निरंतर घूमता है, आगे की ओर चलता रहता है। गीता में भगवान ने कहा है कि "किसी प्राणी के लिए बिना कर्म किए जीवित रहना संभव नहीं। मैं स्वयं भी सदैव कर्मरत रहता हूँ, यदि ऐसा न करूँ तो लोकव्यवहार नष्ट हो जाए। जीवित प्राणी निःचेष्ट नहीं रह सकता।"

कर्मत्याग करके संसार छोड़ने की विडंबना व्यर्थ है, केवल कर्मफल का त्याग ही संभव है। भूख, प्यास, निद्रा, सर्दी, गर्मी, मल विसर्जन, आत्मरक्षा, जिज्ञासा, महत्त्वाकांक्षा आदि कितनी ही स्वाभाविक आवश्यकताएँ ऐसी हैं जो बलात् प्रेरणा करके मनुष्य को कर्म में लगा देती हैं। इससे कोई भी बच नहीं सकता, फिर यह कहना कि हमने कर्म का त्याग कर दिया है, हमारे लिए कोई कर्म करना शेष नहीं रहा, हम संसार से अलग हो गए, एक उपहासास्पद एवं भ्रमपूर्ण धारणा है।

मानव जीवन कर्म करने के लिए है। हमें निरंतर क्रियाशील रहना चाहिए। यह क्रियाशीलता जब ज्ञान, कर्म और भक्ति की त्रिवेणी बन जाती है तो उसके तट पर रहने वाला जीव, जीवन मुक्त हो जाता है। बालकपन ज्ञानयोग के लिए, यौवन कर्मयोग के लिए,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बुढ़ापा भक्तियोग की साधना के लिए विशेष रूप से उपयुक्त अवसर है, तो भी तीनों आपस में घनिष्टता पूर्वक मिले हुए होने के कारण हर समय तीनों की साधना होती रहती है।

जिन दिनों ज्ञान संपादन किया जा रहा है, उन दिनों सारा समय केवल मात्र पढ़ने या सुनने में ही नहीं लग सकता है। कर्तव्य कर्मों को भी करना पड़ता है और उदार हृदय से सहवासियों के साथ प्रेम एवं सेवामय परमार्थ भी करना पड़ता है। इसी प्रकार यौवन में विशेष रूप से कर्मरत रहते हुए भी ज्ञान संपादन एवं प्रेम-प्रदर्शन को छोड़ा नहीं जा सकता। हर छोटे-बड़े कार्य में तीनों के समन्वय की आवश्यकता होती है। मात्रा की न्यूनाधिकता का अंतर हो सकता है, पर प्रत्येक अवस्था में प्रत्येक कार्य में ज्ञान, कर्म और भक्ति का सम्मिश्रण रहना चाहिए तभी कोई क्रिया आनंददायक फल देने वाली और सच्ची सफलता देने वाली बन सकती है।

पाठको! इस त्रिविध योग का साधन करो। गृहस्थ रहते हुए भी योगी बनो। साधारण काम करो, पर उनमें उद्देश्य ऊँचा रखो। सिद्धांत और आदर्श के भाव मन में रखो और भोग एवं स्वार्थ की तुच्छता छोड़कर आत्मकल्याण एवं लोकसेवा की दृष्टि से कार्य करो। सद्ज्ञान का संपादन करते रहो, फल की इच्छा छोड़कर अपने कर्तव्य कर्म में जुटे रहो। नि:स्वार्थ भाव से प्राणिमात्र के साथ प्रेम रखो। यह त्रिविध योग आपको जीवन लक्ष्य की सफलता तक सुविधापूर्वक पहुँचा देगा।

योग साधन के लिए कपड़े रंगने, जटा रखाने, कमंडल, चिमटा या मृगछाला धारण करने की जरूरत नहीं है। आप अपने मनोभावों में परिवर्तन कीजिए। दृष्टिकोण को बदल डालिए। घर में रहकर भी योग साधना हो सकती है और आत्मा को परमात्मा बनाने का जीवन लक्ष्य पूरा हो सकता है। ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग हमारे नित्य के जीवन में हर घड़ी व्यवहृत होने वाली साधनाएँ हैं, इन्हें अपने विचारों और कार्यों में ओतप्रोत कर लीजिए। आपका जीवन तप रूप बन जाएगा और आप तपस्वियों को प्राप्त होने वाला महान फल प्राप्त करेंगे। □

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org